CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

A352

सरल गायत्री साधना

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

सरल गायत्री साधना

(गायत्री साधना के सभी पक्षों पर विस्तृत रूप से प्रकाश डालने वाली खोजपूर्ण और अनुभव सिद्धि पुस्तक)

लेखक :

डॉ० चमनलाल गौतम

रचयिता व सम्पादकः– गायत्री सिद्धि, गायत्री तन्त्र, गायत्री की उच्च साधनाएँ, गायत्री का अर्थ चिन्तन, गायत्री साधना के चमत्कार, २४ गायत्री साधना, गायत्री सहस्रनाम, मन्त्र महाविज्ञान, ओंकार सिद्धि तन्त्र रहस्य, तन्त्र महाविद्या और तन्त्र महासिद्धि आदि

प्रकाशक :

संस्कृति संस्थान

ख्वाजाकुतुब, (वेद नगर), बरेली–२४३००३ (उ०प्र०)

फोन : ४७४२४२

सर्वाधिकार प्रकाशकाधीन	संशोधित संस्करण २०००	मूल्यः बीस रुपये मात्र

मुद्रकः सरस्वती संस्थान, छत्ता बाजार, मथुरा

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

सरल गायत्री साधना

(गायत्री साधना के सभी पक्षों पर विस्तृत रूप से प्रकाश डालने वाली खोजपूर्ण और अनुभव सिद्धि पुस्तक)

लेखक :

डॉ० चमनलाल गौतम

रचयिता व सम्पादकः– गायत्री सिद्धि, गायत्री तन्त्र, गायत्री की उच्च साधनाएँ, गायत्री का अर्थ चिन्तन, गायत्री साधना के चमत्कार, २४ गायत्री साधना, गायत्री सहस्रनाम, मन्त्र महाविज्ञान, ओंकार सिद्धि तन्त्र रहस्य, तन्त्र महाविद्या और तन्त्र महासिद्धि आदि

प्रकाशक :

संस्कृति संस्थान

ख्वाजाकुतुब, (वेद नगर), बरेली–२४३००३ (उ०प्र०)

फोन : ४७४२४२

सर्वाधिकार प्रकाशकाधीन	संशोधित संस्करण २०००	मूल्यः बीस रुपये मात्र

मुद्रक: सरस्वती संस्थान, छत्ता बाजार मथुरा

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

भूमिका

सद् आचार व विचार की प्रतीक-

गायत्री को वेद माता, जगत माता कहते हैं। यह सद्बुद्धि व सद्विचारों की प्रदाता है। जीवन के हर मोड़ पर यह हमारी सहायता करती है। विभिन्न परिस्थितयों में भी हमारा साथ नहीं छोड़ती। कुमार्ग से बचने और सुमार्ग की ओर अग्रसर होने की निरन्तर प्रेरणा देती है। प्राचीनकाल में ऋषि, मुनि, महापुरुषों व सन्त महात्माओं सभी ने इसकी महाशक्ति से अपने जीवन को सार्थक किया। इस जगत्माता का ध्यान करते हुये सबसे पहले यही प्रेरणा मिलती है कि नारी जाति को मातृवत् जानो उसे माता, बहिन और पुत्री की पवित्र दृष्टि से देखो। गायत्री साधक इसका अभ्यास करता है। बाजार में जहाँ कहीं भी उसे नारी के दर्शन होते हैं, वह उसमें गायत्री माता के ही दर्शन करता है। यह साधना उसे उच्च आध्यात्मिक भूमिका में प्रविष्ट करती है। आध्यात्मिक शक्तियों के स्रोत उसके लिए खुल जाते हैं। वह समाज में एक आदर्श उपस्थित करता है। सामाजिक व्यवस्था बनाये रखने में सहायक सिद्ध होता है। मन्दिर में गायत्री माता के दर्शन करते समय या चित्र आदि को सामने रखकर साधना में बैठते समय यदि नारी सम्मान और प्रेरणा की भावना उत्पन्न नहीं हुई है, तो उसकी गायत्री साधना अभी अधूरी है, अपरिपक्व है। साधना की सफलता तो इसी में है कि वह अपने इष्टदेव को हर प्राणी में देखे, कण-कण में उसके दर्शन करे, उसके अतिरिक्त और कुछ दिखाई न दे, एकीभाव की प्राप्ति हो।

गायत्री उपासना सद् आचार व विचार की शिक्षा देती है, सुपथ पर चलते रहने की प्रेरणा देती है, साधना से सद्बुद्धि रूपी शक्तियों

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

की वृद्धि होती है जिससे बुरे विचार व भावनायें उस स्थान को छोड़ देती हैं। साधक का मन निर्मल व पवित्र हो जाता है। गायत्री मन्त्र इन्द्रिय संयम का पाठ पढ़ाता है। यही साधक की मानसिक व आत्मिक शक्तियों को बढ़ाने का मार्ग है शक्ति बढ़ने से पाप और कुविचार नहीं रहते। निर्बल मन में ही वह प्रवेश करने का साहस करते हैं। गायत्री मन को सबल बनाने का अमोघ अस्त्र है, पापों से बचाता है।

सर्वश्रेष्ठ उपासना–

गायत्री बुद्धि की अधिष्ठात्री देव हैं। यह विश्व सर्वश्रेष्ठ प्रार्थना है। इसे गुरुमन्त्र भी कहा जाता है। भारतीय ऋषियों ने इसे सर्वश्रेष्ठ जप, तप और ध्यान घोषित किया था तथा प्रत्येक द्विज के लिये इसकी साधना का अनिवार्य विधान बनाया गया था। ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य बालकों को ८, १०, १२, वर्ष की आयु में यज्ञोपवीत पहनाया जाता था। उस सामूहिक आयोजन में गायत्री मन्त्र की ही दीक्षा गुरू देता था और जीवन पर्यन्त इसे अपनाये रखने का आदेश देता था। यज्ञोपवीत की ही मूर्ति है। गायत्री भारतीयों का इतना प्रिय इष्ट रहा है कि एक क्षण के लिये भी वह इससे अलग नहीं रह सकते, वह हर समय इसे छाती से चिपटाये रहते हैं। प्राचीन काल में भारत के प्रत्येक नर-नारी का यही इष्ट और उपास्य था, इसी से शक्ति प्राप्त करके गृहस्थ विरक्त, सन्त, महात्मा, ऋषि, महर्षि सभी श्रेणियों में साधक जीवन को ऊँचा उठाने में समर्थ होते थे।

गायत्री सनातन अनादिकाल का मन्त्र है। पुराणों में कथा आती है कि सृष्टि का निर्माण करने वाले ब्रह्मा को आकाशवाणी से गायत्री मन्त्र प्राप्त हुआ था। साथ ही यह आदेश मिला कि इसी की साधना से सृष्टि निर्माण की शक्ति होगी। ब्रह्मा ने दीर्घकाल तक घोर तपश्चर्या की और तब वह सृष्टि रचना करने में समर्थ हुए।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

विश्वामित्र गायत्री मन्त्र के ऋषि हैं। उन्होंने गायत्री को सर्वाधिक तपश्चर्या की थी। उन्होंने अपने तप के बल पर नई सृष्टि की रचना की थी। इतने महानतम और दुस्तर कार्य को सम्पादित करने की क्षमता गायत्री मन्त्र की साधना में है।

गायत्री के चार चरण हैं। चारों वेदों को इन्हीं की व्याख्या माना जाता है। तभी गायत्री को वेदमाता के सम्मानित पद से विभूषित किया गया है। ब्रह्मा के चार मुखों का अभिप्राय भी यही है। जिसने गायत्री को जान लिया, उसने चारों वेदों के मर्म को समझ लिया। यह माना जाता है कि गायत्री मन्त्र के २४ अक्षरों से बीज रूप से वह सभी शिक्षाएँ ओत-प्रोत हैं जो चारों वेदों में उपलब्ध होती हैं। विद्वानों का तो यहाँ तक कहना है कि गायत्री मन्त्र में अनेक प्रकार के दिव्य अस्त्र शस्त्र बहुमूल्य धातुएँ बनाना, औषधियाँ, रसायन, वायुयान जैसे यन्त्र बनाना प्राण विद्या, कुण्डलिनी चक्र, योग सिद्धियाँ, दश महाविद्या, शाप और वरदान का ज्ञान विज्ञान निहित है।

शास्त्रों में गायत्री मन्त्र–

यही कारण है कि हमारे शास्त्रों में स्थान-स्थान पर गायत्री की महिमा का गान किया है अपौरूषेय वेद और उसके श्रुति स्वरूप उपनिषद्, आदि के सर्वोच्च सिद्धान्तों के अनुसार गायत्री ही सावित्री ब्रह्मविद्या, वेद माता और शब्द ब्रह्म आदि गौरवमय नामों से पुकारी जाती है। भगवान् श्रीकृष्ण ने भी गीता में कहा है—"गायत्री छन्द सामहम्" समस्त छन्दों में मैं ही गायत्री हूँ। अग्नि पुराण में अग्निदेव ने कहा है—"सन्ध्या विधि परिपूर्ण करने के पश्चात् गायत्री का स्मरण और जप करना पायमान होने से अर्थात् उसकी उपासना, जप करने से वह गुरु, शिष्य, स्त्री और प्राणी सबका उद्धार करती है" साविश्रुपनिषत् का [illegible] है—"इस सावित्री देवी को जो स्त्री और पुरुष गृहस्थ धर्म का पालन करते हुए समझते हैं वे मृत्यु से छूट जाते हैं अर्थात् पुनः

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

जन्म नहीं लेते ।" (१३) ।

अथर्ववेद (१९।७१।१) में अनेकों प्रकार के भौतिक व आध्यात्मिक लाभों का वर्णन करते हुए कहा गया है—"स्तुता मया वरदा वेदमाता प्रचोदयन्तां पावमानी द्विजानाम् । आयुः प्राणं, प्रजां पशुं कीर्ति, द्रविणं ब्रह्मवर्चसं मह्यं दत्वा व्रजेत् ब्रह्मलोकम् ।" अर्थात् "मेरे द्वारा स्तुत की गई वेद का माता मुझ स्तोता को आयु प्राण, प्रजा, पशु कीर्ति, धन, ब्रह्मचर्य देती हुई ब्रह्मलोक के लिए गमन करें।' छान्दोग्योपनिषद् (३।१२) में गायत्री को परब्रह्म स्वरूप कहा गया है—"गायत्री तो सर्व भूत रूप है । जो कुछ स्थावर और जङ्गम है, सब गायत्री है । यह जो सर्वभूत रूप गायत्री है, वही पृथ्वी गायत्री है, वही इस पुरुष के शरीर में है जिससे उसमें प्राण स्थित हैं और उसे त्यागकर नहीं जाते।" महाभारत (३।२००।८३—८५) में गायत्री को ग्रह-बाधाओं को दूर करने का माध्यम बताया गया है ।

कूर्मपुराण के अनुसार जब एक ओर गायत्री और दूसरी ओर चारों वेद तराजू के पलड़ों पर रखे गये तो गायत्री का पलड़ा भारी रहा । मनुस्मृति के दूसरे अध्याय में गायत्री साधना की प्रशंसा करते हुए मनु ने कहा "जो ब्राह्मण प्रातःकाल प्रणव और व्याहृतियों सहित गायत्री की उपासना करता है, वह वेद के अध्ययन का पुण्य फल प्राप्त करता है । यदि गायत्री मन्त्र का जप प्रतिदिन एक हजार करे तो जिस तरह सर्प अपनी केंचुली को छोड़ देता है, उसी तरह वह साधक महापापों से छूट सकता है ।" अग्नि पुराण में भी एक हजार जप से परम पद प्राप्ति का दृढ़ आश्वासन दिया गया है । महर्षि यम तो गायत्री की प्रशंसा में सबसे आगे बढ़ गये और कहा है "गायत्री से श्रेष्ठ कोई जप नहीं है गायत्री से श्रेष्ठ कोई हवन नहीं ।" विष्णु धर्मोत्तर पुराण के अनुसार गायत्री हर साधक का अपनी भावना के अनुसार फल देती है जो काम

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

नाओं की पूर्ति चाहता है, उनकी कामना सिद्ध होती है। जो सद्गति चाहते हैं, उनका पक्ष प्रशस्त होता है और जो निष्काम साधना करते हैं, वह परब्रह्म को प्राप्त होते हैं।' महर्षि व्यास ने गायत्री को पापों की निवृत्ति का अपूर्व साधन माना है, तभी वह लिखते हैं दस बार गायत्री के उच्चारण से तीन दिन के छोटे पाप समाप्त हो जाते हैं, सौ बार के उच्चारण से अनेकों पापों से छुटकारा मिलता है। एक हजार के जप से उपपातक नष्ट हो जाते हैं एक लाख जप से महापातक दूर होते हैं। कोटि जप से साधक जो चाहे प्राप्त कर सकता है।

शास्त्रों में वर्णित उपरोक्त लाभ सभी साकार हो सकते हैं जब गायत्री साधना विधिपूर्वक की जाये। प्रस्तुत पुस्तक में गायत्री साधना की सभी विधाओं पर विस्तृत रूप से प्रकाश डाला गया है। गायत्री की महान शक्ति को आकर्षित करने के लिए आवश्यक है कि साधना के नियमों का पूर्ण रीति से पालन किया जाये।

—०—

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

विषय-सूची

१—श्रद्धा साधना को नींव है। ६
२—दृढ़ संकल्प और इच्छा शक्ति साधना के प्रतीक हैं। १४
महान शक्ति, नव निर्माण, मव जागरण, रोग निवारण, मान कार्यों का सम्पादन व्रत धारण, शक्ति के चमत्कार, इच्छा शक्ति का साधना में उपयोग।
३—भावना शक्ति से साधना में गति आती है। २६
शक्तियों का भण्डार, वैज्ञानिक, पद्धति, संकेत द्वारा आत्म कल्याण और नई सृष्टि की रचना।
४—साधना स्थल एकान्त, शान्त व सात्विक वातावरण से युक्त हो। ३४
५—अनुकूल दिशा में साधना करने से ही शक्ति का आकर्षण होता है। ४०
६—सात्विक और असंक्रामक आसन उपयोग किया जाये। ४४
कुशासन, मृगचर्म, व्याघ्र व सिंह चर्म और रेशम व उनके आसनों की उपयोगिता।
७—जप साधना में माला की उपयोगिता। ५३
महिमा, प्रकार देवमन्त्र जाप की करमाला, शक्ति मन्त्र जाप की करमाला, वर्णमाला, माला में १०८ दाने क्यों? माला निर्माण माला संस्कार, पंचोपचार और विधि।
८—गायत्री जप का विधान। ६९
जप विधि जप के नियम गायत्री की ब्रह्म संध्या (आचमन, शिखाबन्धन, प्राणायाम, अघमर्षण व न्यास), संध्या के अन्य, मन्त्र, दैनिक पूजा विधि, गायत्री शाप विमोचनम्, वसिष्ठ शाप विमोचनम् विश्वामित्र शाप विमोचनम्।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

प्रातःकाले ब्रह्मरूप गायत्री ध्यानम्, मध्याह्न, काले विष्णु-रूप-गायत्री ध्यानम् सायकाले शिवरूप गायत्री ध्यानम्, गायत्री हृदयम्, गायत्री कवचम्, गायत्री तर्पणम्, क्षमा प्रार्थना, स्तोत्र पाठ, आरती, चालीसा, विसर्जन और अर्घ्यदान।

९–गायत्री साधना की उत्कृष्ट ध्यान विधियाँ। ९८

सिद्धि का साधन, परिभाषा, आत्म दर्शन की अनुभूति तेज की वृद्धि, एकता की प्राप्ति, स्थूल और सूक्ष्म ज्ञान, वैज्ञानिक स्पष्टीकरण, आदर्श ध्यान योग की विधि, अनुभव सिद्धि विधि।

१०–हवन विधि ११०

विधि—पवित्रीकरण, आचमन, शिखाबन्धन, प्राणायाम न्यास, पृथ्वी पूजनम् कलश पूजनम्, देवपूजनम्, षोडशोपचार पूजनम्, चन्दन धारणम्, स्वस्ति वाचनम्, रक्षा विधानम्, अग्नि स्थापनम् अग्नि प्रदीपनम्, होम, सुमिधा विधानम्, जल प्रसेचनम्, आज्याहुति, गायत्री मन्त्र द्वारा आहुति, स्विष्टकृत होमः, पूर्णाहुति, वसोधारा आरती घृत अवघ्राण, भस्म धारण, क्षमा प्रार्थना, साष्टाङ्ग नमस्कार, शुभकामना, अभिसिचनन्, प्रदक्षिणा, विसर्चन, आरती, यज्ञ की महिमा, अर्घ्यदान।

११–गायत्री साधना के नियम १३७

१२–नियम का दृढ़ता से पालन किया जाये। १४१

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

सरल गायत्री साधना

श्रद्धा साधना की नींव है।

जहां श्रद्धा है वहां सिद्धि है। जहां श्रद्धा का अभाव है, वहीं संदेह कुतर्क आदि की उत्पत्ति होती है जो सफलता के प्रतिबन्ध माने जाते हैं। अतः श्रद्धा के बिना सफलता की आशा करना व्यर्थ है। जिस साधना से सिद्धि प्राप्त करने का प्रयत्न आरम्भ किया जा रहा है, उसके प्रति दृढ़ आस्था। महर्षि पतञ्जलि के शब्दों में अगर बुद्धि के साथ—सत्कार से होनी चाहिए जो साधना का मेरुदण्ड मानी जाती है। जिस साधना पर श्रद्धा नहीं है, उसे केवल परीक्षा के लिए करना अपना समय व्यर्थ खोना है क्योंकि उससे विशेष लाभ प्राप्त करने की आशा नहीं करनी चाहिए। जब सफलता का प्रथम सोपान ही साधना में सम्मिलित नहीं तो सफलता और सिद्धि कैसी? सिद्धि के द्वार की पहली शर्त है श्रद्धा। अतः जो साधक सिद्धि प्राप्त करना चाहता हो, उसे इष्टदेव के प्रतिपूर्ण श्रद्धा होनी चाहिए और यदि उसे कोई सन्देह है तो गुरुजनों से कुतर्क और दुराग्रह से नहीं—जिज्ञासक की दृष्टि से अपनी शंकाओं और भ्रमों को दूर कर लेना चाहिए। सद्गुरु शिष्य के सभी भ्रमों को दूर करने में प्रसन्नता अनुभव करते हैं। सन्देह दूर होने पर ही श्रद्धा में दृढ़ता आती है। इसलिए हमारे शास्त्रों ने एक स्वर से इसकी परम आवश्यकता को अनुभव किया है। वेद भगवान का आदेश है :—

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

वेद ने कहा है 'श्रद्धा के बिना [illegible] नहीं होती ? जिस यज्ञीय पदार्थ को होम किया जाता है, वह श्रद्धा से ही सफल होता

 CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

है। सन्मति के मस्तक पर श्रद्धा ही निवास करती है। यह सब बातें यथार्थ ही हैं (ऋग्वेद १०-१५-१७)" हे श्रद्धे ! दानशील को अभीष्ट फल प्रदान करो। जो दान करने की इच्छा करता है (परन्तु धनाभाव से दान नहीं कर सकता उसे भी इच्छित फल का भागी बनाओ। हे श्रद्धे ! इन याज्ञिकों और यजमानों को अभीष्ट फल दान करो।' (ऋग्वेद १५६-१७)

"वायु को अपने रक्षक रूप में प्राप्त करने वाले देवता और मनुष्य श्रद्धा की आराधना करते हैं। मन में जब कोई निश्चय उठता है, तब उपासकगण श्रद्धा का ही सहारा लेते हैं। श्रद्धा की अनुकूलता से वैभव की प्राप्ति होती है।' (ऋग्वेद १०-५०-४)। प्रात-काल मध्याह्न और सायंकाल में हम श्रद्धा का ही आह्वान करते हैं। हे श्रद्धे ! हम आराधकों को तुम अपनी महिमा से परिपूर्ण करो। ऋग्वेद (१०-१५०-५)।' जो मनुष्य मन को श्रद्धायुक्त करके ईश्वर की आराधना करता हैं, वह ज्ञान का सम्पादन करता है। ऋग्वेद (२-२४-३)।

गीता में श्रद्धा को सिद्धि का आवश्यक माध्यम स्वीकार किया है यथा—'मनुष्त श्रद्धामय है प्रतीक कुछ भी हो परन्तु जिसकी जैसी श्रद्धा होती है, उसे वैसी ही सिद्धि प्राप्त होती है।' (१७।१) कर्मयोगियों में श्रद्धावान श्रेष्ठ हैं, (६।४७)। इस पर श्रद्धा न रखने वाले पुरुष मुझे नहीं पाते' (६।३), मुझ में मन लगाकर सदा युक्त चित्त होकर के परम श्रद्धा से मेरी जो उपासना करते हैं, वह मेरे मत में सबसे उत्तम युक्त अर्थात् योगी हैं (१२।२)। जो श्रद्धावान पुरुष इन्द्रिय संयम करके उसी के पीछे पड़ा रहा, उसे भी यह ज्ञान मिल जाता है। और ज्ञान प्राप्त हो जाने से तुरन्त ही उसे परम शान्ति प्राप्त होती है" (४।२६)।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

श्रद्धा से लिये गये कार्यों की ओर संकेत करते हुए (१८-२८) में

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

कहा गया है "अश्रद्धा से जो हवन किया हो, दान दिया हो तप किया हो या जो कुछ कर्म किया हो, 'असत' कहा जाता है।'

आध्यात्म विद्या के प्रतिनिधि उपनिषद् भी श्रद्धा को मनन, चितन और आत्म विकास का आवश्यक अंग मानते हैं—

उस विज्ञानमय आत्मा का श्रद्धा ही सिर है, (तैत्तरीयोपनिषद्)।' हृदय में श्रद्धा प्रतिष्ठित है क्योंकि हृदय से ही पुरुष श्रद्धा को जानता है। (वृहदारण्य)। छान्दोग्योपनिषद् में सनत्कुमार ने श्रद्धा का विश्लेषण करते हुए कहा है 'जिस समय मनुष्य श्रद्धा करता है, तभी वह मनन करता है। बिना श्रद्धा किये कोई मनन करता। अपितु श्रद्धा करने वाला ही मनन करता है।

मन्त्र का अर्थ मनन भी होता है। जब श्रद्धा से मनन किया स्वमेव क्रियान्वित होती रहती है तो श्रद्धा युक्त साधक को एक अच्छा मंत्रज्ञ स्वीकार करने से कोई आपत्ति नहीं होनी चाहिए।

पद्म पुराण (भूमि खण्ड) में महर्षि जैमिनि ने स्व-अनुभव से कहा है—'श्रद्धा देवी धर्म की पत्नी है। वे विश्व को पवित्र एवं अभ्युदय शील बनाने वाली है। इतना ही नहीं, वे सावित्री के समान पावन, जगत् को उत्पन्न करने वाली तथा संसार सागर से उद्धार करने वाली है। आत्मवादी विद्वान श्रद्धा से ही धर्म का चिन्तन करते हैं। जिसके पास किसी भी वस्तु का संग्रह नहीं है, ऐसे अकिंचन मुनि श्रद्धालु होने के कारण ही दिव्यलोक को प्राप्त हुए।

श्री रामकृष्ण परमहंस के अनुसार 'ईश्वर प्राप्ति की श्रद्धा दूसरी सीढ़ी है पहली समागम।' उड़िया बाबा स्वामी के शब्दों में 'देवता, वेद, गुरु मन्त्र, तीर्थ, ओषधि और महात्मा यह सब श्रद्धा से फल देते हैं, तर्क से नहीं।'

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

इसलिए श्रीश्री आनन्दमयी माँ ने साधकों को उपदेश देते हुए कहा है—'जिस कर्म से जिस फल का विकास अवश्यम्भावी है, उस फल

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

का जब तक उदय न हो, तब तक श्रद्धा के साथ उस कर्म को पूरे मनो योग से पकड़े रहना चाहिये।

श्रद्धा आदर बुद्धि का दूसरा नाम है। जिस साधना से जीवन उत्थान की महत्वपूर्ण भूमिकायें प्रशस्त करनी हैं, उसके प्रति आदर बुद्धि रखना कोरे अन्धविश्वास या पिछड़ेपन की बात नहीं है। इसे मनोविज्ञान का भी समर्थन प्राप्त है श्रद्धा से विश्वास की वृद्धि होती है। जितना विश्वास बढ़ता है, उतनी ही सिद्धि की आशा बढ़ती है। इस श्रद्धा विश्वास और आशा से आत्म संकेत की प्रक्रिया अपने आप प्रारम्भ हो जाती है कि जिस लक्ष्य की प्राप्ति के लिये साधना की जा रही है वह पूर्ण होने जा रहा है। श्री रिवेका बोयरे ने अपनी पुस्तक 'एवरीमैंस सर्च' में लिखा है शक्ति की धारा को विपरीत शुभ दिशा में प्रवाहित करने के लिए आवश्यक है कि जिस परिणाम को हम उपस्थित देखना चाहते हैं, उस परिस्थिति को हम निर्मित करें और अपनी चिन्ता के विपरीत भाव का चिंतन करें।' इस आधुनिक मनोविज्ञान का सिद्धान्त है कि हम जैसा चिंतन करते हैं, बाह्य संसार में उसके अनुरूप ही आकृतियाँ हैं मूर्तियाँ बनने लगती हैं अर्थात् हम मन को जैसे संकेत देते हैं, हमारा बाहरी संसार भी वैसे ही बनता चला जाता है। यह निर्माण का कार्य संकेत ही करते हैं। इन शुभ संकेतों का सीधा प्रभाव हमारे गुप्त मन पर पड़ता है गुप्त मन ईश्वर प्रदत्त शक्ति का भण्डार है। दैवी शक्तियों का वह मूल स्रोत है। ईश्वरीय उत्तराधिकार में मिली समस्त शक्तियाँ वही सोई पड़ी हैं। उन्हें प्राप्त करने के लिये उन्हें जगाना होगा। उसका उपाय शुभ संकेत ही है। यह हमारे गुप्त मन का नव निर्माण करते हैं और हमारे चारों ओर का संसार वैसा ही बनता चला जाता है। इसी से इच्छाओं की पूर्ति और सिद्धि होती है यह आत्म संकेत की प्रक्रिया श्रद्धा युक्त मन में ही आरम्भ होती है। अश्रद्धा से तो शक्ति का ह्रास ही होता है।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

अत: मन्त्र साधना में पूर्ण श्रद्धा की अपेक्षा रहती है। सद्गुरु ने जिस उपयोगी मन्त्र की दीक्षा दी है, उसी के प्रति श्रद्धा भावना रखते हुए जप साधना चलती रहे। मन्त्र बहुत हैं। सभी उपयोगी हैं। किसी को छोटा बड़ा और अपेक्षाकृत अधिक शक्तिशाली घोषित करना उचित नहीं है। जिस मन्त्र पर श्रद्धा हो, वही पार लगा देता है। कहते हैं महर्षि बाल्मीकि ने अनजाने में उल्टा मन्त्र जप किया था उसी से सिद्धि प्राप्त करली। साधक की जैसी श्रद्धा भावना होती है, वैसे ही वह फल प्राप्त करता है। अत: जिस मन्त्र की दीक्षा ली है, उसी की साधना जीवन भर करते रहना चाहिए। साधना में परिवर्तन नहीं करना चाहिए। परिवर्तन का अर्थ श्रद्धा का अभाव ही है। परिवर्तन से फिर दूसरी साधना में भी निष्ठा नहीं जम पाती है। उसमें भी दोष दृष्टि-गोचर होने लगते हैं अथवा दूसरी साधना आकर्षक व सुलभ दिखाई देने लगती है। भगवान कृष्ण ने गीता में ऐसे साधकों का मार्ग दर्शन किया है और कहा कि अपनी साधना भले ही दूसरी साधना की अपेक्षा कम आकर्षक हो, अथवा अधिक श्रमसाध्य हो तो भी उसे नहीं छोड़ना चाहिए इसी में साधक का कल्याण है। तन दूसरी सहज साध्य साधनाओं को देखकर अवश्य भुलावे में पड़ सकता है परन्तु अपनी ही साधना में लगे रहना ही श्रेयस्कर है। जिस तरह पतिव्रता स्त्री का एक ही पति होता है। उस तरह से साधक की साधना एक ही है, गुरु एक ही होता है, मन्त्र भी एक ही होता है। इसमें परिवर्तन से हानि की ही सम्भावना रहती है। लाभ की आशा नहीं की जा सकती।

एक साधना में निरन्तर लगे रहने से विशिष्ट लाभ का वैज्ञानिक आधार है। जिस मन्त्र की साधना साधक कर रहा है, उस मन्त्र की साधना जिन हजारों लाखों साधकों ने पहले की है, उनके शब्द कम्पन आकाश में विचरण करते हैं। जब साधक के शब्द कम्पन आकाश में

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

पहुंचते हैं तो उस जाति के शब्द कम्पन उनके चारों ओर एकत्रित हो जाते हैं और विश्व भ्रमण से लौटते हुए उन शब्द कम्पनों का अच्छा संगठित समूह उनके साथ रहता है, जिसका अनुकूल प्रभाव साधक के अन्तकरण पर पड़ता है। इसका अर्थ यह है कि ऋषियों की पूर्व साधनाओं का प्रभाव भी साधक के मन पर पड़ता है। इसलिए साधना वही शीघ्र फलवती मानी जाती हैं जिस मन्त्र की साधना ऋषियों द्वारा सबसे अधिक की गई है। इस दृष्टि से तो गायत्री साधना ऋषियों द्वारा सबसे अधिक की गई है। इस दृष्टि से तो गायत्री साधना सर्वाधिक प्रशस्त मानी गई है जिससे थोड़े श्रम से अधिक लाभ की आशा उपरोक्त वैज्ञानिक आधार पर की जा सकती है।'

अत: साधक को उचित है कि वह अविचल व अटूट श्रद्धा से एक ही साधना में लगा रहे। उसी में निश्चित रूप से सिद्धि मिलेगी। कहा भी है—

तस्यैत कथिता ह्यर्था: प्रकाशन्ते महात्मन

जिस व्यक्ति में अटूट श्रद्धा है और गुरु में ईश्वर भाव है उसे जो साधना बताई जाती है, वह सिद्धि हुए बिना नहीं रहती। जो शत प्रति शत अनुभव सिद्ध है। अत: गायत्री साधक को चाहिए कि वह अटूट श्रद्धा के साथ साधना आरम्भ करे।

—×—

दृढ़ संकल्प और इच्छाशक्ति सफल साधना के प्रतीक हैं।

मन्त्र सिद्धिमें दृढ़ संकल्प और इच्छा शक्ति का विशिष्ट महत्व है। इच्छा जब बुद्धि द्वारा परिष्कृत होकर दृढ़ निश्चय का रूप धारण कर लेती है, तब वह संकल्प कहलाती है। बिना इच्छा के किसी क्रिया का

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

 CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

आरम्भ नहीं होता। क्रिया में यदि दृढ़ता का समावेश न हो तो सफलता में सन्देह रहता है।

महान् शक्ति—

संकल्प एक महान् शक्ति है। ऋषियों एवं महापुरुषों की संकल्प साधना में ही धर्म, संस्कृति, भाषा एवं जाति का समुचित विकास हुआ। विज्ञान की अप्रत्याशित उन्नति देखकर चकित हो जाना पड़ता परन्तु वह भी संकल्प शक्ति का ही चमत्कार है। विश्व के बड़े-बड़े महापुरुषों राजनीतिज्ञों, कवियों, लेखकों, सन्तों, साधुओं, वीरों एवं वैज्ञानिकों ने संकल्प शक्ति से अपने लक्षित कार्य पूर्ण किये हैं। सिद्धि एवं सफलता का रहस्य संकल्प शक्ति ही है। मन की थोड़ी एकाग्र इच्छा शक्ति से जादूगर अद्भुत इन्द्रजाल के खेल कर दिखाते हैं। तब हम अपनी पवित्र इच्छा शक्ति का विकास करके मन्त्र सिद्धि नहीं प्राप्त कर सकते? जब इससे पहले हजारों लाखों साधकों ने मन्त्र सिद्धि प्राप्त की है तो कोई कारण नहीं कि हमें भी वह प्राप्त न हो सके। बाजार में भी कोई वस्तु विना मूल्य के नहीं मिल सकती। मन्त्र सिद्धि का भी मूल्य है, उसे देकर ही सिद्धि की आशा करनी चाहिये। अटूट श्रद्धा, विश्वास, धैर्य, साहस में दृढ़ संकल्प और इच्छा शक्ति का होना भी परम आवश्यक है।

नव निर्माण—

हम जिधर भी दृष्टि उठाते हैं, उधर ही संकल्प के चमत्कार दिखाई देते हैं। सृष्टि रचना जैसा महानतम कार्य इसी शक्ति द्वारा सम्पन्न हुआ है। उपनिषदों में इसका वर्णन इस प्रकार आता है—उस परमेश्वर ने विचार किया कि प्रकट होऊँ और अनेक नाम रूप धारण करके बहुत हो जाऊं। इसके बाद उसने तप किया अर्थात् Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu Nepal संकल्प का विस्तार किया। (ऐतरेयोपनिषद्)।' परमात्मा ने पाँचों

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

सूक्ष्म महाभूतों को तपाया, संकल्प द्वारा उनमें क्रिया उत्पन्न की। (एततेरेयोपनिषद् १।२)।' 'यह जगत प्रकट होने से पहले एक मात्र परमात्मा ही था। इसके सिवा दूसरा कोई भी चेष्टा करने वाला नहीं था। उस परम पुरुष परमात्मा ने 'मैं निश्चय ही लोगों की रचना करूँ', इस प्रकार विचार किया। एतरेयोपनिषद्)। इनमें ऋषि का यह आदेश सन्निहित है कि परमात्मा ने सृष्टि रचना जैसा विशालतम कार्य संकल्प द्वारा पूर्ण किया है। इसलिए महान कार्यों को सम्पन्न करने के लिए संकल्प करने की आवश्यकता है।

नव जागरण–

संकल्प द्वारा मनुष्य की सभी शक्तियाँ जागृत हो जाती हैं। किसी कठिन कार्य को पूरा करने के लिए वह अपनी सम्पूर्ण शक्ति लगा देता है, उसी तरह अपने संकल्प को पूरा करने के लिए वह अपनी सम्पूर्ण शक्ति को एकत्रित करके एक स्थान पर लगा देता है। जिस प्रकार की बिखरी हुई किरणों से कपड़े पर कोई विशेष प्रभाव नहीं पड़ता परन्तु जब उन्हें आतशी शीशे द्वारा एकत्रित कर लिया जाता है तो वह कपड़े को जला देती है, उसी प्रकार से जब मनुष्य अपने मन को सब तरफ से हटाकर एक ही कार्य की पूर्ति में लग जाता है तो वह सफल मनोरथ होता है। संकल्प करना मानो अपनी शक्तियों को ऐकाग्र कर लेना है। इससे संकल्पित कार्य की पूर्ति होती है, साथ-साथ अपनी साधना में भी उन्नति होती है। यहाँ 'एक पंथ दो काज' वाली कहावत चरितार्थ हो जाती है।

संकल्प में महान शक्ति है। इसके द्वारा लक्षित कार्य को सम्पन्न करने की प्रेरणा मिलती रहती है विचारों से एक तूफान सा खड़ा हो जाता है। रगड़ से बिजली पैदा होती है। निरन्तर विचारों की रगड़ से, चिन्तन व मनन से विचारों में बल की वृद्धि होती है।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

विचारों में बल आने से वह ऐसा मार्ग ढूँढ़ निकालते हैं जिस पर आचरण करके वह कार्य सम्पन्न हो सकता है।

महात्मा गाँधी का कहना है कि "संकल्पहीन जीवन बिना नींव का घर है। संकल्प के बल पर यह संसार टिका हुआ है। संकल्प न लेने का अर्थ अनिश्चित या डाँवा-डोल रहना है।" संकल्प करने का साहस न करना कमजोरी की निशानी है। ऐसे व्यक्तियों से कोई भी काम सफलता पूर्वक सम्पन्न होना सम्भव नहीं है। जेम्स एलन इस सम्बन्ध में अपने विचार प्रकट करते हुए कहते हैं 'वास्तव में मनुष्य की सबसे ज्यादा कमजोरी उसमें दृढ़ निश्चय व संकल्प की कमी है।" अर्थात् संकल्प न करना अपनी कमजोरी प्रदर्शित करना है। संसार में जितने भी महापुरुष हुए हैं, उन्होंने उसी महाशक्ति का सहारा लेकर महान कार्य किये हैं।

संकल्प सुप्त शक्तियों को जगाने का माध्यम है। जिस तरह विस्फोटक पदार्थ स्वयं नहीं फटते, अग्नि के सहयोग से ही उनकी शक्ति विकसित होती है। मनुष्य के पास अनेक शक्तियाँ हैं, परन्तु वह उनका उपयोग करना नहीं जानता। संकल्प वह वैज्ञानिक विधि व्यवस्था है जिससे वह उन उपकरणों का उपयोग करता है। संकल्प ही शक्तियों के एकत्रीकरण का कार्य करता है। संकल्प एक विद्युत है जो प्राप्त शक्तियों के अणु-अणु में गति लाने की सामर्थ्य रखती है। गति ही प्रत्यक्ष शक्ति का दूसरा नाम है।

"सङ्कल्पं मातरं देवीं चतुर्वर्ग प्रदायकम्।"

"मन के संकल्प में धर्म अर्थ, काम और मोक्ष दिलाने वाली सभी शक्तियाँ भरी पड़ी हैं।"

संकल्प शक्ति की अपार सफलताओं को देखकर ही ऋषियों ने इसे ब्रह्म की संज्ञा दी है और संकल्प ब्रह्म की उपासना के लिए प्रेरित किया है। इस मूल्यांकन से स्पष्ट रूप से विदित होता है कि उन्होंने इसकी महान् शक्तियों का अनुमान लगा लिया था।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

 CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

एक अंग्रेजी विद्वान के अनुसार सबसे कठिन कार्य सबसे पहिले करना चाहिये। स्वेट मार्डन लिखते हैं—जब संकल्प का दूत किसी नव युवक के कान में आकर कहता है कि तुम्हें यह काम करना होगा तो वह नवयुवक तुरन्त उत्तर देता है—हाँ, मैं इसको अवश्य करूँगा। खेद है कि गिने चुने नवयुवक ही ऐसे हैं जो इस दवा को "हिम्मत के साथ एक बार ही में पी जावें।"

रोग निवारण—

मानसिक एवं शारीरिक रोगों का निवारण भी इस दृढ़ सङ्कल्प शक्ति के कारण ही होता है। कई व्यक्ति अपने जीते रहने दृढ़ सङ्कल्प साधना से मृत्यु के मुख से बचे हैं उनके अन्तकरण से यही आवाज आती है। मैं नहीं मरूँगा, मैं पूर्ण रूप से स्वस्थ होऊँगा, ईश्वर की मुझ पर अद्भुत कृपा है। संकल्प शक्ति एक कल्प वृक्ष है। इस साधना से ही पुनर्जीवन पाते हैं। निराश एवं बुरे संकल्पों को धारण करने वाले व्यक्ति कहते हैं "मेरा अब इस संसार में व्यर्थ है। ईश्वर मौत दे दे तो ही अच्छा है, मुझे सफलता नहीं मिल सकती है, मुझे असफलता की सीढ़ियों पर ही फिसलना है।" ऐसे व्यक्तियों को चाहिये कि वे ऐसी हीन मनोवृत्ति न रखकर सत् संकल्प शक्ति का अपने में जागरण करे। ऐसे व्यक्ति स्वयं को और समाज को धोखा देते हैं। उन्हें यह पता नहीं कि वे क्या हैं? उन्हें इस मूल्यवान जीवन का महत्व मालूम नहीं है। हम ईश्वरांश हैं। हमारे अन्दर सर्व शक्तिमान ईश्वर विद्यमान है।

महान कार्यों का सम्पादन—

एक अंग्रेज विद्वान ने लिखा है "संसार की दृष्टि में कुछ बनने के लिये दृढ़ संकल्प के साथ कार्य आरम्भ करना चाहिये। हमें ऐसे काम करना चाहिए जिनके करने से हमारी सामर्थ्य तथा योग्यता की प्राप्ति हो। आलस्य तथा ऐश्वर्य जिनमें बहुत-सा समय तथा शक्ति नष्ट हो

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

जाती है, त्याग देना चाहिए। संकल्प शक्ति बढ़ाने के लिये मन की एकाग्रता की अतीव आवश्यकता है।"

महाराष्ट्र के अमरवीर शिवजी ने संकल्प किया कि वह स्वतन्त्र महाराष्ट्र की स्थापना करेंगे। वह सफल हुए। महाकवि कालीदास, बाल्मीक, बोपदेव एवं भूषण आदि कवि संकल्प शक्ति द्वारा ही सामान्य जन से महान् कवि हुए। दृढ़ संकल्प शक्ति की विचार धारा से हमारे अन्तःकरण में आत्मोन्नति की दिव्य ज्योति प्रज्वलित होती है।

भीष्म पितामह अपनी दृढ़ संकल्प शक्ति के बल पर सारे शरीर के वाणों से छिदे रहने पर भी छः माह तक शर-शैय्या पर पड़े रहे और चेतन बने रहे। दूसरे तरह के व्यक्ति भी होते हैं जो अपने तनिक से घाव-चोट में चिल्लाने लगते हैं, वेहोश हो जाते हैं, कई तो भय के कारण मर तक जाते हैं। सत्यव्रती हरिश्चन्द्र अपने जीवन की कठिन परिस्थितियों की परीक्षा की घड़ी में अपने दृढ़ संकल्प शक्ति के कारण ही निभ सके थे। दूसरी ओर कई लोग जीवन की सामान्य-सी परिस्थितियों में रो देते हैं, हार बैठते हैं, जीवन की सम्भावनाओं का अन्त कर डालते हैं।

महाराणा प्रताप जिन्होंने वर्षों जंगलों में खोहों में जीवन बिताया बच्चों सहित नंगे, भूखे प्यासे भटकते रहे, किन्तु इसके बावजूद भी दृढ़ सङ्कल्प शक्ति के सहारे वह अजेय वीर शक्तिशाली मुगल सल्तनत को चुनौती देता रहा और झुका नहीं। थोड़ी संख्या में दुबले-पतले क्रान्तिकारियोंने भारतीय स्वतन्त्रताको जो तूल दिया और विश्वव्यापी ब्रिटिश सत्ता को चुनौति दी, वन उन वीरों के दृढ़ संकल्प का ही परिणाम था, फाँसी की सजा सुनने पर भी जिनका वजन बढ़ा फाँसी के तख्ते पर पहुँच कर जिन्होंने अपनी मुस्कराहट से मौत के भयङ्कर स्वांग का गर्व चूर कर दिया, यह सब उनकी दृढ़ संकल्प शक्ति की ही करामात थी।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

नेपोलियन बोनापार्ट के सिपाही अपने आपको नेपोलियन समझ कर लड़ते थे। प्रत्येक सिपाही में नेपोलियन की इच्छा शक्ति काम करती थी। नेताजी सुभाषचन्द्र बोस के नेतृत्व में आजाद हिन्द फौज के तनिक से सैनिक ने हथेली पर जान रखकर अंग्रेजी शासन से लड़ाई की। लोकमान्य तिलक ने भारतवर्ष को स्वराज्य मन्त्र की शिक्षा दी— "स्वतन्त्रता हमारा जन्म सिद्ध अधिकार है और हम उसे लेकर रहेंगे।" और यही नारा प्रत्येक भारतीय का प्रेरक मन्त्र बन गया। एक दिन इसी मन्त्र ने हमें स्वतन्त्रता रूपी सिद्धि प्रदान की। यह मन्त्र कोई शाब्दिक व्याख्या मात्र ही नहीं था वरन् इसमें तिलक की दृढ़ संकल्प शक्ति का अपार चैतन्य सन्निहित था।

चाणक्य के संकल्प ने विरोधी पक्ष के राज्य की ईंट से ईंट बजा दी। समर्थ गुरु रामदास ने हिन्दुत्व के उत्थान और सगठन का संकल्प किया तो हजारों शक्तिशाली मठों की स्थापना कर डाली। इन्हीं की प्रेरणा से शिवाजी ने भारतीय संस्कृति के उत्थान और हिन्दू साम्राज्य की स्थापना का बिगुल बजाया था। राम ने रावण को और कृष्ण ने कंस जैसे शक्तिशाली सम्राटों को धराशायी कर दिया। विश्वामित्र के संकल्प ने आसुरी शक्तियों को विध्वंस किया। सावित्री का अदम्य साहस और संकल्प ही सत्यवान को यमराज के पञ्जों से बचा कर लाया था। भागीरथ के संकल्प ने गङ्गावतरण की महासाधना पूर्ण की और असम्भव को सम्भव बनाया। पार्वती के दृढ संकल्प और तप ने पति के रूप में उन्हें शिव की प्राप्ति कराई।

ध्रुव तो दृढ़ संकल्प के एक तरह से प्रतीक ही बन गये थे। ध्रुव जब एकाग्रचित्त से तप साधना में लीन होगया तो लिखा है "योगी ध्रुव के चित्तमें भगवान् विष्णु के स्थित होजाने पर सर्वभूतों को धारण करने वाली पृथ्वी [illegible] खड़े होने से पृथ्वी का बाँया आधा भाग झुक गया और फिर दाँये चरण पर

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

खड़े होने से दांया भाग झुक गया और जिस समय वह पैर के अंगूठे से पृथ्वी को दबाकर खड़ा हुआ तो पर्वतों के सहित समस्त भूमण्डल विचलित होगया। उस समय नदी-नदी और समुद्र आदि सभी अत्यन्त क्षुब्ध हो गये और उनके क्षोभ से देवताओं में भी बड़ी हलचल मची" विष्णु पुराण (१।१२।८-११) तब मायासे रची हुई सुनीति उपस्थित हुई और कहने लगी कि तेरे इस सुकुमार से शरीर को यह घोर तप शोभा नहीं देता, तुम्हारे तो यह खेलने कूदने के दिन हैं। इसको छोड़ दो और मुझे आश्रय दो। उसने डराया धमकाया भी और कहा कि देखो राक्षस अस्त्र-शस्त्र लेकर आ रहे हैं, जिनके मुख से अग्नि की लपटें निकल रही हैं। ऐसे राक्षस भी उपस्थित हो गये और बहुत कोलाहल मचाया और मारो, काटो, खाओ की धमकियां देने लगे परन्तु ध्रुव पर कोई प्रभाव न हुआ और वह अपनी साधना में लगे रहे। जीवन साधना में भी राक्षसी बाधायें चारों ओर से घेरे रहती हैं। शिथिल साधक तो उनके प्रवाह में बह जाता है परन्तु बाधाओं पर, वही विजय प्राप्त करता है, जो दृढ़ता को अपनाता है। अपने व्रत में दृढ़ रहना आवश्यक है। तभी इष्टदेव के दर्शन होते हैं—इच्छित उद्देश्य की पूर्ति होती है।

ध्रुव की तपस्या से प्रसन्न होकर भगवान विष्णु ने उन्हें साक्षात् दर्शन दिये। घोर तप करने के लिए, कष्ट, सहन करने के लिए तैयार रहता है, जिसका जीवन प्रतिज्ञा व संकल्पबद्ध रहता है, एकाग्रचित्त से अपनी समस्त शक्तियों को अपने एक उद्देश्य की पूर्ति में लगा देता है, भोगवासनाओं में लिप्त होकर अपनी शक्ति का ह्रास नहीं करता, श्रेष्ठ कर्मों का आचरण करता है, वही विष्णु के दर्शन प्राप्त करने का उच्चतम पद प्राप्त करने का अधिकारी है।

भगवान बुद्ध ने जब बोधि वृक्ष के नीचे साधना करनी आरम्भ की तो यह दृढ़ संकल्प किया कि या मन्त्र की सिद्धि होगी या शरीर का

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

पतन होगा। मेरे त्वचा, अस्ति, स्नायु आदि सूख जायें शरीर के रक्त, माँस आदि सूख जायें, इससे भी बड़ा अनिष्ट हो जाय तो भी साधना नहीं छोड़ूँगा जब तक कि निश्चित लक्ष्य की प्राप्ति न हो। इस प्रकार की दृढ़ता से सिद्धि निःसन्देह प्राप्त होती है।

व्रत धारण–

साधना में सफलता के लिए व्रत धारण करना पड़ता है। व्रतधारी का अर्थ है—व्रत धारण करने वाला, प्रतिज्ञावद्ध जीवनयापन करने वाला, कुछ आदर्शों के लिए पूरी शक्ति के साथ तत्पर रहना वाला। व्रतशीलता एवं प्रतिज्ञा लेने से अतः चेतना में शक्ति आती है। इसलिए हिन्दू संस्कृति के अनुयायी अपने बालकों को थोड़ा-सा समझदार होते ही व्रतबन्ध (यज्ञोपवीत) संस्कार कराते हैं। जिनके सामने कोई लक्ष्य, व्रत, आदर्श, कर्त्तव्य नहीं ऐसा व्यक्ति जीवन में कोई महत्वपूर्ण कार्य नहीं कर सकता। मनुष्य की सारी अन्तःशक्ति व्रतशीलता में ही सन्निहित है। यदि वह किसी लक्ष्य की पूर्ति की प्रतिज्ञा करले तो उसकी पूर्णता बहुत अंशों में निश्चित हो जाती है।

व्रत एक विशेष उद्देश्य से किया गया संकल्प ही है। संकल्प में महान शक्ति है। संकल्प अपनी सुप्त शक्तियों को जाग्रत करने का विधान है। किसी कठिन कार्य को पूरा करने के लिए जैसे मनुष्य अपनी सारी शक्ति लगा देता है, उसी तरह अपने संकल्प को पूरा करने के लिए वह अपनी सम्पूर्ण शक्ति को एकत्रित करके उसका प्रयोग करता है।

मनुष्य की संकल्प शक्ति का प्रभाव चेतन जगत पर ही नहीं वरन् अचेतन पदार्थों पर भी पड़ता है। अपनी संकल्प शक्ति के बल पर ही मनुष्य पत्थर, धातु आदि की मूर्ति में भगवान का साक्षात्कार करता है

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

प्रबल सङ्कल्प शक्ति के द्वारा मनुष्य, जड़, चेतन, प्रकृति को भी प्रभावित कर सकता है।

इच्छा शक्ति के चमत्कार–

संकल्प का इच्छा शक्ति से घनिष्ठ सम्बन्ध है। वास्तव में जीवन की सफलता, उत्कर्ष-अपकर्ष, उन्नति-अवनति-उत्थान-पतन सब मनुष्य की इच्छा शक्ति की प्रबलता और निर्बलता के ही परिणाम हैं। सबल और दृढ़ इच्छा शक्ति सम्पन्न लोगों को अभद्र विचार, कुकल्पनायें भयानक परिस्थितियाँ उलझने में भी विचलित नहीं कर सकती। वे अपने निश्चय पर दृढ़ रहते हैं। उनके विचार स्थिर और निश्चित होते हैं। उन्हें बार-बार नहीं बदलते। प्रबल इच्छा शक्ति से शारीरिक कष्ट भी उन्हें अस्थिर नहीं कर सकते। ऐसे व्यक्ति हर प्रकार की परिस्थितियों में अपना रास्ता निकाल कर आगे बढ़ते रहते हैं। अपने व्यक्तिगत हानि-लाभ से भी प्रभावित नहीं होते।

दृढ़ इच्छा-शक्ति मानसिक क्षेत्र का वह दुर्ग है जिसमें किसी भी बाह्य परिस्थिति, कल्पना, कुविचारों का प्रभाव नहीं हो सकता। दृढ़ इच्छा-शक्ति सम्पन्न व्यक्ति जीवन की भयंकर झंझावातों में भी अजेय चट्टान की तरह अटल और स्थिर रहता है। ऐसा मनुष्य सदैव प्रसन्न और शान्त रहता है। जीवन का सुख, स्वास्थ्य, प्रसन्नता, शान्ति उनके साथ रहते हैं।

संसार में जितने भी महान कार्य हुए हैं, वे मनुष्य की प्रबल इच्छा शक्ति का संयोग पाकर ही हुए। दृढ़ इच्छा शक्ति सम्पन्न व्यक्ति ही महान् कार्यों का संचालन करता है। वही नव सृजन, नव-निर्माण, नव-चेतना का शुभारम्भ करता है। अपने और दूसरों के कल्याण, एवं उत्थान का मार्ग खोजता है।

निर्बल इच्छा शक्ति वाले मनुष्य अपने या दूसरों के लिए कोई उपयोगी कार्य नहीं कर सकते। ऐसे लोगों के मन में अनेकों सन्देह,

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal.

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

कुकल्पनायें, कुविचार पैदा होने लगते हैं। उसके निश्चय बार-बार बदलते हैं। एक काम को अधूरा छोड़कर दूसरे को हाथ में लेते हैं। फिर दूसरे को छोड़कर तीसरे को करने लगते हैं। छोटी-छोटी कठिनाइयों में उलझने से ही परेशान होने लगते हैं। निर्बल इच्छा शक्ति से अपने और दूसरों के अकल्याण की भावनाएँ निर्बाध गति से आने-जाने लगती हैं।

इच्छा शक्ति का साधना में उपयोग–

इच्छा शक्ति की कमी ही दुर्भाग्य का दूसरा नाम है अपने सौभाग्य की वृद्धि के लिए इच्छा शक्ति का विकास आवश्यक है। अपने को निर्बल समझने वाला ही निर्बल है। संकल्प शक्ति के विकास के लिए अपनी महानतम और ईश्वर प्रदत्त शक्तियों की नाप तौल करनी चाहिए। मन को शुभ संकेत देने चाहिए कि आप महान् हैं, ईश्वर की सजीव मूर्ति हैं, आपके लिये विश्व में कोई वस्तु अप्राप्य नहीं है। निरन्तर सोते जागते और हर कार्य करते समय यह शुभ संकल्प धारण करना चाहिए कि आप तुच्छ नहीं हैं, महान् हैं, अशक्त नहीं हैं शक्तिवान् हैं। आपकी शक्तियों का पारावार नहीं। आप प्रतिभा, विचार और शक्ति के केन्द्र हैं। आप महान शक्तियों को लेकर ही पृथ्वी पर अवतीर्ण हुए हैं। आप शक्तियों के पुञ्ज हैं। शक्ति आपकी दासी है और वह आपकी आज्ञा पालन के लिए हर समय व्याकुल रहती है, उनसे उचित काम लेना आपका जन्म सिद्ध अधिकार है। उठिये ! अपने पद को सम्भालिये, अधिकारों का सदुपयोग कीजिए और अपना काम शुरू कीजिये। आप असम्भव बना सकते हैं, आप विधाता की रचना का सबसे बड़ा चमत्कार और सर्व प्रधान जीवन माने जाते हैं।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal
मनुष्य वस्तुतः तुच्छ, नाचीज, क्षुद्र, नश्वर, हाड़ मांस का पुतला वासनाओं का गुलाम नहीं है वह निखिल, ब्रह्मांड व्यापी, सृष्टिकर्त्ता,

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

सच्चिदानन्द अमृतत्व की तेजस्वी बूंद है। सम्राटों के सम्राट परमात्मा का वह सच्चा उत्तराधिकारी राजकुमार है। इतनी बड़ी सृष्टि का मुकुटमणि बनाकर, शासन करने योग्य शारीरिक और मानसिक विलक्षण शक्तियों की सेना देकर अनेकानेक साधन और सुविधायें देकर, सुसज्जित युवराज की तरह प्रजा का पालन करने के लिए संसार में ईश्वर ने उसे भेजा है। अपने क्षेत्र का उत्तरदायी अफसर गवर्नर जनरल है। क्या यह कम गौरव की बात है? क्या कभी चौरासी लाख योनियों में भ्रमण करने वाले कोटानुकोटि जीव जिस पद को प्राप्त करने में असमर्थ हैं, उस दृष्टि के सर्वोच्च अफसर का पद प्राप्त करना कोई मामूली बात है? जिस सुखों, सौभाग्यों, सुविधाओं, साधनों, शक्तियों योग्यताओं का स्वप्न असंख्य प्राणी देख न पाते होंगे, उनसे समुत्पन्न होना क्या कोई कम बात है? निःसन्देह आत्मा परमात्मा के ही समान है। उसमें अपने पिता की सम्पूर्ण शक्तियां और सम्भावनायें छिपी हुई हैं। करोड़ों के खजाने ऋद्धि-सिद्धियों के अगणित भण्डार उसके रोम-२ में छिपे पड़े हैं। मनुष्य पारस पत्थर है। मनुष्य चिन्तामणि है, मनुष्य कल्पवृक्ष है देवताओं का देवता है, विश्व की महानतम श्रेष्ठ वस्तु मनुष्य है उससे ऊँची और कोई वस्तु इस लोक में नहीं है। सृष्टि का जर्रा-२ उसकी महत्ता के सामने मस्तक झुकाये खड़ा है, प्रकृति गज मुक्ताओं का थाल भरे उसकी आरती उतार रही है, वरुण उसका चंवर डुला रहा है, इन्द्र उसके चरण धो रहा है सूर्य चन्द्र उसकी देहरी पर दीपक की तरह टिमटिमा रहे हैं। करोड़ों कण्ठ से हमें कहने दीजिये कि मनुष्य का गौरव महान है।"

आपमें सब कुछ है। आवश्यकता इस बात की है कि आप अपनी असीम शक्तियों का अनुभव करें और उन्हें जाग्रत करने का प्रयत्न करें। प्रबल इच्छा शक्ति और दृढ़ संकल्प इन शक्तियों को जाग्रत करते हैं। गायत्री सिद्धि प्राप्त करने के लिए इनका सहयोग आवश्यक है अन्यथा

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

निराशा ही होगी। गायत्री साधना में सफलता प्राप्त करने के दृढ़ सङ्कल्प और इच्छा शक्ति का होना अत्यन्त आवश्यक है।

—✡—

भावना शक्ति से साधना में गति आती है

मन्त्र साधना और भावना का घनिष्ट सम्बन्ध है। साधक जैसी भावना करता है, वैसी ही सफलता उसे प्राप्त होती है। भावना से साधना में गति आती है। मन्त्र सिद्धि के लिए भावना शक्ति का होना अत्यन्त आवश्यक है।

"मन्त्र, तीर्थे द्विजे देवे दैवज्ञे, भेषजे गुरौ।
यादृशी भावना यस्य सिद्धिर्भवति तादृशी।।"

"मन्त्र, तीर्थ, ब्राह्मण, देवता, ज्योतिषी, दवा तथा गुरु में जिस तरह की भावना होती है, उसके अनुसार उसे सिद्धि प्राप्त होती है।"

साधक की सुप्त शक्तियों को जाग्रत करने का काम भावना करती है।

शक्तियों का भण्डार—

भावना शक्तियों का भण्डार होती है। भावना से ही शक्तियों का उदय होता है। इसलिए जो जैसी भावना करता है वह वैसी ही शक्तियों को प्राप्त करता है, वैसा ही बन जाता है। स्थूल की गति कारण सूक्ष्म है—शरीर स्थूल है, भावना सूक्ष्म। जैसी भावना होगी, वैसे ही कार्य में शरीर प्रवृत्त रहेगा। भावना का निर्मल, पवित्र प्रबल और परमार्थमय होना ही आध्यात्मिक क्षेत्र में ऊँचा उठाने का अथवा स्थूल से सूक्ष्म की

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

ओर गति करने का चिह्न है। वह व्यक्तिगत रूप में ही नहीं, वरन् हर कार्य में प्रबल और पवित्र भावना सफलता, लाने में समर्थ होती है। भावना सोई हुई शक्तियों को जगा देती है। उनमें गति उत्पन्न करती है। भावना से फलीभूत होने का तात्पर्य शक्तियों का गतिवान होना ही है।

भगवान पारसमणि है। लोहे को सोना बनाती है। इस विषय में कुछ विचारकों के अनुभव देखिये—

चार्ल्स डिक्सन कहते हैं—"जिस मनुष्य की जैसी आंतरिक भावनायें होंगी, उसकी बाह्य रूपरेखा वैसी ही बन जायेगी। वक्सटन का कथन है—"विश्वासों के आधार जीवन का स्थूल रूप तैयार होता है। महर्षि वशिष्ठ का मत है "बीज की जाति का ही पौधा उगता है और संकल्पों की जाति की परिस्थितियाँ पैदा होती हैं—आत्मा जैसी-जैसी भावना करती है, वह शीघ्र वैसी ही हो जाती है और उसी प्रकार शक्ति से पूर्ण हो जाती है।" हम देखते हैं कि जिसकी भावना भीतर से भलाई, सच्चाई प्रेम, सहानुभूति, करुणाशील वात्सल्य और सद्भावों से ओत-प्रोत होती है, वह सदा सुखी रहता है क्योंकि प्रतिक्रिया से उसमें दैवी गुणों का बाहुल्य हो जाता है।

जो सदा स्वार्थ, ईर्ष्या, धोखेबाजी, लोभ, छल, कपट काम, क्रोध, अहंकार, दूसरों को हानि पहुँचाने के भाव रखता है, उसमें यह दुर्गुण दिनों-दिन बढ़ते जाते हैं और पाप अत्याचार की ओर उसकी प्रवृत्ति भी बढ़ती जाती है जिसके परिणामस्वरूप वह नाना प्रकार के कष्ट उठाता है। सुख-दुःख, उन्नति-अवनति, बन्ध-मोक्ष हमारी भावनाओं पर आधारित हैं। जो अपने को अयोग्य असमर्थ, अभागा, व अशक्त मानता है, वह वैसा ही बन जाता है। इसके विपरीत जो अपने को योग्य समर्थ भाग्यवान और शक्तिवान समझता है वह भी वैसा ही बनता जाता है।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

अपने आपको नीच या महान, सुखी या दुःखी, साधारण या असाधारण पवित्र या अपवित्र, सदाचारी या दुराचारी, पापी या पुण्यात्मा, चतुर या मूर्ख, निर्बल या शक्तिवान् भाग्यहीन या भाग्यवान बनाना भावना के ही खेल है, जो जैसी भावना करता है वह वैसा ही बन जाता है।

महात्मा गांधी ने कहा है—"अपने को निर्बल समझने वाला ही निर्बल है।" जीवन-रेखा को लिखना भावना के अधिकार में है तो भाग्य को बनाना भावना-शक्ति के हाथ में है। इसको जिधर चाहे मोड़ लेती है। होमियोपैथिक विज्ञान के जन्मदाता डा० हैनीमैन ने अपने पुस्तक आर्गिनन् आफ मैडीसन में लिखा है 'भावनाओं में रोग उत्पन्न भी किये जा सकते हैं और अच्छे भी।' यदि किसी भी विश्वास दिलाते रहें कि वह निर्बल होता जा रहा है, वस्तुतः थोड़े दिनों में वह निर्बल होता जायगा। यदि किसी को उसके स्वास्थ्य निखरने का आश्वासन दिछायें तो उसका स्वास्थ्य और निखरेगा। किसी को निर्बल, असमर्थ और नालायक़ कहना पाप है अथवा शक्तिवान बताना या प्रशंसा करना (खुशामद नहीं) और योग्य बताना पुण्य।

सार यह है कि भावना शक्ति महान है। इस भावना शक्ति मीरा को दिये विष को अमृत में बदल दिया था। उसी भावना शक्ति से धन्ना भगत ने पत्थर को भगवान बनाया था। यह भगवान शक्ति ही थी कि "रुक्मणि ने एक तुलसीदल से तोला प्रभु गिरधर को।" सुदामा के कच्चे चावलों में भावना का समावेश होने से उनमें इतनी मिठास आ गई थी कि भगवान कृष्ण ने उनको बड़े चाव से खाया था। शबरी के भावनामय वेरों का क्या ठिकाना है।

साधना में भावना का होना आवश्यक है अन्यथा पूर्ण लाभ की आशा नहीं की जा सकती।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

न काष्ठे विद्यमो देवो न पाषाणे न मृण्मयो ।
भावे हि विद्यते गेवस्तस्माद्भावस्तु कारणम् ॥

"काष्ठ, पाषाण और मिट्टी की मूर्तियों में देवता नहीं होते, वे तो मानसिक भावों में ही रहते हैं और वही उनका कारण है ।"

शास्त्र भी भावना की महत्ता का प्रतिपादन करते हैं—

भावेन लभते सर्वं भावेन देव दशकम् ।
भावेन परमं ज्ञानं तस्माद् भावावलम्बनम् ॥
यादृशी भावना यस्य सिद्धिर्भवति तादृशी ।

—रुद्रयामल

"भाव से ही सब कुछ प्राप्त होता है, भावना की दृढ़ता से ही देव-दर्शन होते हैं, भावना से ही ज्ञान प्राप्त होता है । इसलिए भावना का ही अवलम्बन करना चाहिए ।"

यादृशी भावना यस्य सिद्धिर्भवति तादृशी ।

"जिसकी जैसी भावना होती है, उसे वैसी ही सिद्धि मिला करती है ।"

बहुजायात् तथा होमात् काम क्लेशादिविस्तरैः ।
न भावेन विना देव यन्त्रमन्त्राः फलप्रदाः ॥

—भावचूड़ामणि

"बहुत जप और हवन करने से काय-क्लेश की ही वृद्धि होती है । बिना सच्चे भाव के यन्त्र, मन्त्र और देवता कोई फलदायक नहीं होता है ।"

सदा सुखदायिनो विभाति शुद्ध भावना,
सदैव दुखदायिनी भवेच्च दुष्ट भावना ।
न निष्फला भवेद्यतः कदापि कोऽपि भावनाः
यथा मतिस्तथ गतिर्वदन्ति वेदवादितः ॥

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

 CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

"शुद्ध भावना सदैव सुख प्रदायक होती है, उसी प्रकार दुष्ट भावना का फल अवश्य दुखदायी निकलता है। किसी की भावना कभी भी निष्फल नहीं होती। वेदवासियों के कथानुसार' जिसकी जैसी मति होती है, वैसी गति को वह प्राप्त होता है।"

किं न्यासविस्तरेणैव किं भूतशुद्धिकिस्तरै।
किं वृथा पूजने-नैव यवि भावो न जायते ॥
फला भावश्च नियत भावभावात् प्रजायते।

—कलावती तन्त्र

"न्याय के विस्तार और शुद्धि से क्या प्रयोजन है और पूजन आदि से भी क्या फायदा है, यदि हृदय में सच्ची भावना मौजूद नहीं है तो फल तो कर्म के अनुसार ही मिलेगा।"

तज्जपस्तवर्थं भावनम्।

—योगसूत्र

"जप एवं जपमन्त्र से जिस पदार्थ का बोध हो, उसकी भावना (ध्यान) करना यही सिद्धि का मार्ग है।"

करपात्री स्वामी ने पूजा के विभिन्न अङ्गों में भावना के समावेश करने का निर्देश किया है। यथा—

"नामरूपात्मक जगत् में सच्चिदानन्द की भावना अम्बा की पाद्य समर्पण है। सूक्ष्म जगत् ब्रह्म भावना ही अर्घ्य समर्पण है। भावनाओं में ब्रह्म-भावना ही आचमन है। सर्वत्र सत्वादि गुणों में चिदानन्द भावना ही स्नान है। चिद्रूपा कामेश्वरी में वृत्य विषयता का चिन्तन करना ही प्रोञ्छन है। निरंजनत्व, अजरत्व, अशोकत्व, अमृतत्व, आदि की भावना ही विधि आभूषणों का अर्पण है। आकाश में चिन्मात्र की भावना करनी पुष्पसमर्पण है। तेज में चिन्मात्रत्व की भावना दोष-समर्पण है। अमृतत्व भावना नैवेद्यार्पण है।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal
आधुनिक विज्ञान ने भी भावना की महानता को स्वीकार किया है इसे आधुनिक रूप देकर अनेकों प्रकार के प्रयोगों के सफलता प्राप्त की

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

है पाश्चात्य मनोवैज्ञानिकों ने प्रार्थना से इसका उपयोग किया है और आशाजनक लाभ उठाए हैं।

नोबल पुरस्कार विजेता प्रसिद्ध वैज्ञानिक डा० अलेक्सिस कैरेल ने अपनी पुस्तक 'मैन दी अननोन' में लिखा है भावना से कुछ ही क्षणों में मुँह के घाव, शरीर के अन्य घाव, कैंसर मूत्राशय के रोग और यक्ष्मा आदि के रोगियों के यह रोग मिट गये हैं। कोढ़ के रोगी स्वस्थ हुए हैं कैनेडा निवासी डा० सी० अलवर्ट ई० विल्फ भावना के माध्यम से ही चिकित्सा करते थे। 'थियालाजिया जर्मन की' पुस्तक के अनुसार विश्वास रखकर ईश्वर से भावना पूर्वक प्रार्थना करने पर बड़ी से बड़ी तथा भयंकर बीमारी से मनुष्य छूट जाता है।

वैज्ञानिक पद्धति–

भावना से आरोग्य व अन्य प्रकार के लाभ उठाने की भी एक वैज्ञानिक पद्धति है। अभाव की पूर्ति के लिए गिड़गिड़ाना उचित नहीं है। उससे आत्म-हीनता की भावना उत्पन्न होती है और आशाजनक लाभ ही नहीं होता है। भावना के समय अशुभ के स्थान पर शुभ के, रोग के स्थान पर निरोगता के अभाव के स्थान पर वैभव और ऐश्वर्य के संकेत मन को देने चाहिए। जिस इष्ट की पूर्ति करने की इच्छा है, उसे अपने भावना नेत्रों से पूरा होता देखें। वह संकेत जितना तीव्र और सुदृढ़ विश्वास पर आधारित होगा; सफलता उतनी ही शीघ्रता से प्राप्त होगी।

अलबर्ट विल्फ ने अपनी पुस्तक 'लेसन्स इन लिविंग' में लिखा है—'परमात्मा से हमें यह कामना नहीं करनी चाहिए कि वह हमें स्वास्थ्य प्रदान करें। उसका ढङ्ग यह होना चाहिए कि कल के लिए उन्होंने मुझे पूर्ण स्वस्थ कर दिया।' श्री निवेला वीयर्ड ने अपनी पुस्तक 'एवरी मैंस सर्च' में इस विषय का स्पष्ट प्रतिपादन करते हुए

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

लिखा है—"शक्ति की धारा को विपरीत शुभ दिशा में प्रवाहित करने के लिए आवश्यक है जिस परिणाम को हम उपस्थिति देखना चाहते हैं, उस परिस्थिति को हम निर्मित करें और अपनी चिन्ता के विपरीत भाव का चिन्तन करें।"

धन के अभाव को दूर करने के लिए यह नहीं करना चाहिए कि मैं अत्यन्त संकट में हूँ, उसे दूर करो। वरन् मानस नेत्रों से अपने प्रभु के सर्व-समर्थ, शक्तिशाली और महान् ऐश्वर्यों के रूपों को निहारना चाहिए और भावना करनी चाहिए कि उनके उत्तराधिकारी और पुत्र होने के नाते इन ऐश्वर्यों पर हमारा स्वाभाविक अधिकार, अतः इनके अधिकार को मान्यता देते हुए प्रभु स्वयं हमारे रिक्त स्थान की पूर्ति कर रहे हैं, हमारे भण्डारों को भर रहे हैं और हम भी ऐश्वर्यशाली हो रहे हैं। इस शुभ भावना से शक्ति का प्रवाह हमारी ओर परिवर्तित होगा, यह निश्चित है।

संकेत द्वारा आत्म कल्याण–

आत्म-कल्याण के लिए भावना करते समय इसी क्रिया का अनुकरण करना चाहिए कि मैं शरीर नहीं आत्मा हूँ, निर्बल नहीं शक्तिशाली हूँ, मैं स्वस्थ और प्रसन्न हूँ मुझे कोई चिन्ता और परेशानी नहीं, मेरा जीवन आनन्दमय है, सांसारिक विपत्तियों और कठिनाइयों का मुझ पर कोई प्रभाव नहीं होता। क्रोध, लोभ, आसुरी शक्तियाँ मुझ पर आक्रमण करती हैं, परन्तु वह अपने प्रयत्नों में असफल रहती हैं। मैं प्रगति पथ पर निरन्तर बढ़ता चला जा रहा हूँ, मुझे रोकने की सामर्थ्य किसी में नहीं है। मेरा शरीर सीमित नहीं है असीम है। सारी सृष्टि मुझमें समाई हुई है और पर प्राणी में मेरा निवास है, मैं सबमें हूँ और सब मुझमें। मेरी आत्मा में प्रचण्ड तेज है। जो भी पाप और अवगुण भ्रष्ट करने में आते हैं, वह इस अग्नि में जलकर भस्म हो जाते हैं और मैं सूर्य की तरह चमक रहा हूँ। मेरे चारों ओर

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

प्रकाश-प्रकाश है, मेरे अज्ञान की समस्त ग्रन्थियाँ टूट गई है और में निरन्तर सत्य-शिवासुन्दर के दर्शक करता हूँ व आनन्द के समुन्द्र में गोते लगाता हूँ, मैं परिवार का पालन-पोषण करते हुए भी उससे अलिप्त हूँ, संसार में रहते हुए भी उससे अलग हूँ शरीर रहते हुए भी जीवनमुक्त हूँ। मैं सब ओर अपने को ही बिखरा हुआ पाता हूँ। यहाँ मेरे अति—रिक्त कोई है ही नहीं, सब ओर मुझे अपने ही दर्शन होते हैं।" इस प्रकार की भावना से साधक शक्ति का पुंज बन जाता है और आत्म—कल्याण के पथ पर ही बढ़ता ही जाता है। मनोविज्ञान के अनुसार इस प्रकार की भावना एक प्रकार का आत्म-संकेत या' आटो सजेशन' है।

भावना में शुभ संकेतों द्वारा अभीष्ट लाभ की सिद्धि में कुछ भी सन्देह की गुंजाइश नहीं। यह प्रमाणित व अनुभव सिद्धि सिद्धान्त व पद्धति है। ईश्वर ने संकल्प किया कि मैं एक हूँ, बहुत हो जाऊँ। इस संकल्प के परिणाम स्वरूप हम इतनी विशाल सृष्टि की रचना को विस्तार देख रहे हैं। हम भी ईश्वर के अंश हैं। हम में भी चिन्तन द्वारा निर्माण करने की शक्ति विद्यमान है। हम जैसा चिन्तन करते हैं। वाह्य संसार में उसके अनुरूप ही आकृतियों व मूर्तियाँ बनने लगती है, अर्थात् इस भावना के प्रयोग से मन को जैसे संकेत करते हैं, हमारा बाहरी ससार भी वैसा ही बनता चला जाता है और हम उसी साँचे में ढलते जाते हैं। ये निर्माण—कार्य हमारा संकेत ही करते हैं।

इन शुभ संकेतों का सीधा प्रभाव हमारे गुप्त मन पर पड़ता है। गुप्त मन ईश्वर प्रदत्त शक्ति का भण्डार है दैवी शक्तियों की बहमूल स्रोत है। ईश्वर से उत्तराधिकार में मिली समस्त शक्तियाँ वहीं सोई पड़ी है। उन्हें प्राप्त करने के लिये उन्हें जगाना होगा। इसका उपाय शुभ संकेत ही है। हमारे गुप्त मन का [illegible] और हमारे चारों ओर का संसार वैसा ही बनता चला जाता है। इसी इच्छा

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

की पूर्ति और सिद्धि करते हैं। भावना का वह मनोवैज्ञानिक आधार है।

अत: भावना एक ऐसी मनोवैज्ञानिक प्रक्रिया है जिससे गुप्त मन सतेज होता है, अन्दर से बाहर की ओर एक आध्यात्मिक प्रवाह चलता है, शक्तियों का सृजन होता है, बिखरी शक्तियाँ एकाग्र होकर दिव्यताओं व महानताओं का नव-निर्माण करती है जिनसे इच्छानुसार लौकिक व पारलौकिक लाभ प्राप्त होते हैं।

जो साधक गायत्री साधना मन्त्र में भावना शक्ति का उपयोग नहीं करता, समझना चाहिए कि वहाँ अपनी गुप्त शक्तियों को जाग्रत करने की प्रक्रिया को नहीं अपना रहा। जिस भौतिक या आध्यात्मिक उद्देश्य की पूर्ति के लिए साधना की जा रही है, उसके साथ भावना करनी चाहिए कि वह उद्देश्य पूरा हो गया है। यहाँ असम्भव का प्रश्न नहीं है। भावना में असीम शक्ति है। वह असम्भव को सम्भव बना सकती है। अत: इष्ट कामना की पूर्ति की भावना से साधना में अप्रत्याशित सफलता प्राप्त होती है, यह निश्चित है।

साधना स्थल एकान्त, शान्त व सात्विक वातावरण से युक्त हो

स्थान का चुनाव गायत्री साधना का एक आवश्यक अङ्ग है। शास्त्रों में सिद्धि के जो साधन बताये गये हैं, वह किसी भी स्थान पर केवल जप की संख्या पूरी करने पर अनुकूल परिणाम प्रस्तुत कर दें, यह आवश्यक नहीं है। साधना के लिए एकाग्रता चाहिए और एकाग्रता की प्राप्ति के लिये एकान्त, शान्त, पवित्र और संस्कारित भूमि चाहिये जिस स्थान में यह गुण हो वही स्थान साधना के लिये उपयुक्त माना जाता है।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal.

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

शास्त्रों में इन स्थानों को अनुष्ठान के लिये विहित माना गया है—एकान्त, उद्यान, पवित्र वन, संगम, तीर्थ, गुहा, सरिता तट, पुण्य क्षेत्र, सिद्धपीठ, विल्व वृक्ष, पर्वत की तराई, तुलसी कानन, गोशाला जिसमें बैल न हों, अपने घर के एकान्त स्थान ये, जल में, पीपल या आंवले के नीचे, देवालय आदि ।

गौ, ब्राह्मण, जल, दीपक, सूर्य, चन्द्रमा अग्नि गुरु के समक्ष बैठ कर जप करना श्रेष्ठ स्वीकार किया गया है । गुरु और ब्राह्मण तो साक्षात् तपोमूर्ति होते हैं, तप की निकटता प्राप्त होने पर तप की प्रवृत्ति बढ़ती है । गौ सात्विकता का प्रतीक है । उसके निकट साधना करने से सात्विक की वृद्धि होती है । जल में बैठ कर साधना करने पर शीघ्र सिद्धि मिलती है । प्रज्ञा चक्षु स्वामी विरजानन्द ने ऋषिकेश में गंगाजल में बैठकर गायत्री जप किया था । उन्होंने किसी विद्यालय में शिक्षा प्राप्त नहीं की परन्तु वह वेद शास्त्रों के प्रकाण्ड पण्डित बने । सूर्य अग्नि और चन्द्रमा देवता माने जाते हैं । उसमें दिव्यता है । दिव्यता के सान्निध्य में दिव्यता का विकास स्वाभाविक है । इन तीनों देवताओं के सुन्दर आकार हैं जो ध्यान के लिए उपयुक्त है । उनके सामने बैठने का अभिप्राय उनके माध्यम से ध्याते अभ्यास करना भी है । यजुर्वेद २।३ में अग्नि को असुरों को दूर करने वाला बताया गया है । स्पष्ट: इससे असुरता का विनास होकर देवी भावों का विकास होता है । सूर्य तेजस्विता की प्रतिमा हैं । एक जीवित जाग्रत पिण्ड है, उससे तेज, ओज, आरोग्यता निश्चित रूप से बढ़ती है । मस्तक गीला करके साधना के बाद सूर्य का अर्घ्यदान देने पर हर बुद्धि तीव्र होती है, चन्द्रमा में शीतलता है । सर्दी से, जथ में बैठने पर अथवा समान करने पर शरीर में सिकुड़न सी आती प्रतीत होती है । उसका प्रभाव बाहर से भीतर की ओर होती है, बाह्य वृत्तियां अन्तर्मुखी होती है । चन्द्रमा के समान साधना करने पर भी यही लाभ होता हैं ।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

घृत दीपक जलाना एक प्रकार का हवन करना है। इससे घृत के परमाणु सूक्ष्म होकर वातावरण को सात्विक और दिव्य बनाते हैं। इस तेजोमय दिव्य वातावरण में साधक का मन एकाग्र होने में सहायता मिलती है। घृत दीपक द्वारा निर्मित सात्विक वातावरण मन की बाह्य वृत्तियों को अन्तंमुखी करता है जिससे मानसिक शान्ति का प्राप्त होना स्वाभाविक है अष्ठान आदि विशेष अवसरों पर अखण्ड दीपक जला कर अभीष्ट सिद्धि की शीघ्र सम्भावना होती है।

विशेष बात यह है कि जहाँ साधना करने पर चित्त की ग्लानि नष्ट होती है और प्रसन्नता की वृद्धि होती, वही स्थान जप के लिए उपयुक्त है। उपरोक्त स्थानों में यह गुण होते हैं, इसलिए उन्हें श्रेष्ठ माना जाता है। शास्त्र की घोषणा है कि घर से दस गुणा गोष्ठ, सौगुना, बन, हजार गुणा तालाब 'लाख गुणा सरिता तट, करोड़ गुणा पर्वत अरबों गुणा शिवावल और अनन्त गुणा गुरु की निकटता है।

उपरोक्त घोषणा का यह अर्थ नहीं है कि घर पर की गई साधना निकृष्ट होती है और उसका कोई विशेष लाभ नहीं होता। मुख्य सिद्धान्त तो यह है कि जहाँ चित्त की एकाग्रता प्राप्ति में सहायता मिलती है, वही स्थान उसके लिए उपयुक्त है। घर का साधना स्थल यदि एकान्त शान्त और दिव्य वातावरण से ओत-प्रोत है और कभी-कभी वहाँ हवन होता रहता तो उसी स्थान से अभीष्ट लाभ की आशा की जा सकती है वहाँ पर परिवार के सदस्यों का आना जाना कम हो, कोलाहल कम हो ताकि साधना में बाधा न पड़े निरन्तर। साधना करते रहने पर वह स्थान भी संस्कारित होने लगता है और फिर कम समय में अधिक लाभ की भी सम्भावना हो सकती है। सिद्धि पीठ पुण्य क्षेत्र और तीर्थ पर साधना करने पर इसलिए सिद्धि मिलती है क्योंकि उस भूमि पर सिद्धि साधकों ने लम्बे समय तक घोर तपश्चर्याएं की है, उनका प्रभाव वह भूमि ग्रहण किये रहती है। जिस भूमि

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

 CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

पर जितनी अधिक साधना की जाती है, वहाँ पर उतनी ही शीघ्रता से सिद्धि मिलती है।

नदी तट व संगम की शीतलता में जप करना श्रेष्ठ कहा है। विश्व वृक्ष तुलसी कानन, पीपल व आंवले के नीचे जप करने का अभिप्राय सात्विक वातावरण में साधना करने से है। मनुजी ने स्पष्ट लिखा है आंवले के नीचे गायत्री साधना करने पर साधक सांसारिक बन्धनों से ऐसे ही छूट जाता है जैसे सर्प अपनी केचुली उतार देता है।

देवालय में नित्य कथा, सत्संग होता है,—अनेकों साधक वहाँ साथना करते हैं। प्रातः सायं आरती होती है हर समय कीर्तन आदि के आयोजन होते रहते हैं, जिससे वातावरण दिव्य बना रहता है इसलिए वहाँ साधना शीघ्र फलदायक होती है परन्तु मन्दिर में भी जहाँ दर्शनार्थियों की भीड़ रहती है, उत्तम परिणामों की आशा नहीं करनी चाहिये। वहाँ पर भी एकान्त शान्त स्थान होना अनिवार्य है।

वन साधना ही स्वाभाविक स्थान है। वहाँ सहज में ही वाह्य वृत्तियाँ अन्तंमुखी होनें लगती है। वहाँ नगर का अपवित्र वातावरण नहीं होता, कोलाहल नहीं होता अशान्ति उत्पन्न करने वाला कोई साधक नहीं होता, मन को विषय वासनाओं में लिप्त करने का कोई माध्यम है नहीं होता। इसलिए वहाँ जप में मन लगता है और एकाग्रता शीघ्र प्राप्त होती है। गृहस्थी, व्यापार और नौकरी के व्यस्त जीवन से दूर वहाँ चिन्तन, मनन का उपयुक्त अवसर मिलता है। एक सिद्धि महात्मा कहा करते थे कि गृहस्थ को भी वर्ष में एक मास के लिए साधना चितन, मनन की साधना के लिए वन में निवास करना चाहिए क्योंकि वहाँ के पवित्र वातावरण में वह सिद्धि की ओर तीव्र गति से पग बढ़ाता है।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

ऋषि गुफाओं में रहकर साधना रत रहते थे। गुफा में वाह्य

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

वातावरण का प्रभाव नहीं रहता, शान्ति का वहाँ अखण्ड साम्राज्य रहता है। एकाग्रता और ध्यान के लिये यह स्थान बहुत ही उपयुक्त रहता है। आजकल अनेकों आश्रमों में विशेष प्रकार से गुहा बनाई गई हैं। वहाँ साधक को अनुकूलता होती हैं।

पर्वत शिखर और गिरि कन्दराओं में साधना का विशेष महत्व है। ऋषि मुनि आत्मचिंतन, अनुसंधान और उत्थान के लिए एकांत पर्वतीय प्रदेश ही चुनते रहे हैं। वहाँ पर घोर तपस्यायें करके वह आत्म कल्याण की उच्चतम स्थिति तक पहुँचे हैं, मानव उत्थान के निश्चित सिद्धान्तों की खोज की हैं जो आज तक विश्व के लिये प्रकाश का पुंज बने हुये हैं और इस विकसित बुद्धिवादी युग के लोग उन्हें अत्यन्त श्रद्धा से देखते हैं। साधना के फल स्वरूप जो सिद्धियाँ प्राप्त होती थीं, वह आज असम्भव सी लगने लगी हैं क्योंकि साधना के प्राचीन नियम पालन करना कठिन हो गया है।

ऋषियों के ऊँचे पर्वतीय प्रदेशों को अपना साधना स्थान चुनने का विशेष कारण था, जिससे आधुनिक चिन्तकों ने भी स्वीकार किया है। जो लोग बद्रीनारायण आदि पर्वतीय यात्राओं पर गये हैं, वहाँ पर कुछ अध्ययन, मनन चिन्तन और साधना की है, वह जानते हैं कि अपर्वतीय स्थानों की अपेक्षा ऊँचे पहाड़ी स्थानों पर मन सहज में ही एकाग्र हो जाता है, उलझी गुत्थियाँ जल्दी सुलझने लगती है। आत्म अनुसधान में सहयोग मिलता और विचारों में एक अनोखा प्रवाह आता दिखाई देता है। ऐसा लगता है कि मौलिक चिंतन के लिये ईश्वर ने हिमालय की ऊँची कन्दराओं को विशेष रूप से बनाया है। क्योंकि अनुभव बताता है कि जो चिंतन वहाँ सम्भव है, वह कोलाहल वाले नगरों में नहीं हो सकता।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

नीचे वातावरण में विचारों की गुप्त प्रवाह पूरी तरह ओत—प्रोत रहता है। काम, क्रोध, लोभ, भ्रष्टाचार, अहङ्कार—राग, द्वेष,

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

शत्रुता आदि की विचारधारायें विभिन्न मस्तिष्कों से निकल कर वायु मण्डल में प्रवेश करती रहती हैं। नीचे के वातावरण में उन्हीं का प्रभाव अधिक रहता है क्योंकि अधिकांश व्यक्ति इन्हीं विचारों से प्रभावित हैं। निर्बल मन के व्यक्ति पर यह आक्रमण करते हैं और शीघ्र ही अपने पक्ष में कर लेती हैं। यही कारण हे कि ऐसे व्यक्ति बुरे संग से जल्दी ही कुप्रवृत्तियों को ग्रहण कर लेते हैं, सशक्त मन के व्यक्ति ही इन आसुरी शक्तियों का विरोध कर पाते हैं, और निरन्तर संघर्ष में रहकर उन्हें पराजित करते हैं।

आधुनिक मनोविज्ञान का भी यही मय है कि वायु मण्डल के निचले भागों में अधिक वायु का प्रभाव रहता है। यहाँ लाखों व्यक्तियों के विभिन्न प्रकार के विचारों की लहरें व कम्पने चलती रहती हैं। अधिकांश सामान्य जनता का स्तर निम्न कोटि का होता है और स्वभावत: उनके मस्तिष्क से स्वार्थपरता के भौतिकवादी विचार ही निकलते हैं और वह कमजोर मस्तिक वालों को अपना पक्षपाती बना लेते हैं। विरले ही विवेकी व्यक्ति उनका मुकाबला कर पाते हैं। ऊँचे वायु मण्डल में वह प्रभाव कम पड़ता है, इसलिए स्वतन्त्र विचार धारा को स्थापित करने में सहायता मिलती है।

कुछ प्रसिद्ध लेखकों का यही मत है। अंग्रेजी के प्रसिद्ध लेखक डाल सेमुअल जामसन का यह अनुभव था कि नीचे कमरों में मन भारी रहता है। अच्छा लेखन ऊपर के कमरों ही मैं हो सकता है। उन्हें साहित्य सृजन के लिए लन्दन में तीसरी व चौथी मंजिल पर कमरा लेना पड़ा था, उनके प्रसिद्ध साहित्यकार की रचना ऊपर के ही कमरों से हुई हैं। प्रसिद्ध उपन्यास सर बाल्टर स्काट का भी यही अनुभव है। उनके प्रसिद्ध उपन्यास भी ऊपर मंजिल के कमरे में ही लिखे गये हैं।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

उपरोक्त कारणों से पर्वतीय यात्राओं और साधनाओं का विशेष

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

महत्व दिया जाता है। इसका कारण स्पष्ट है कि यहाँ पर चित्त की बाह्य वृत्तियों को अन्तर्मुखी करने में विशेष सहायता मिलती है।

योगाभ्यास कुछ के आधुनिक आश्रमों में साउन्ड प्रूफ कमरे बनाये गये हैं जहाँ वन, पर्वत जैसी शांति, एकांत व कोलाहल से रहित स्थिति का अनुभव होता है। ऐसे स्थान पर साधना में सफलता का कोई सन्देह ही नहीं रह जाता है।

अतः गायत्री साधक को साधना के लिए ऐसा स्थान चुनना चाहिए जहाँ कोई बाधा न हो और चित्त की एकाग्रता सहज हो जाती हो।

अनुकूल दिशा में साधना करने से ही शक्ति का आकर्षण होता है

मन्त्र जाप में दिशा का भी विशिष्ट स्थान है। अपनी इच्छा से किसी भी उद्देश्य की पूर्ति के लिए किसी दिशा में बैठकर वाञ्छित लाभ की प्राप्ति करना कठिन है। हर प्रकार की साधना के लिए अलग अलग दिशाओं का निर्धारण किया गया है।

प्रातः कालीन सन्ध्या जप के लिए पूर्व की ओर मुख करने का विधान है। पूर्व देवताओं की दिशा मानी गई हैं। शतपथ ब्राह्मण (१।७।१।१२।) कहा गया है:—

"प्राची हि देवानां दिक्।"

"देवताओं की दिशा पूर्व ही है।"

अथर्ववेद (३।२७।१) में इन्द्र को पूर्व दिशा का स्वामी माना है और यह भी लिखा है कि [illegible] के लिए दिशा में सर्प, धाता, अर्यमा आदि अदित के पुत्र भी निवास करते हैं। विवाह

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

आदि कार्यों में भी पूर्व दिशा ही विहित मानी गई है। अथर्ववेद १२।३।७ कहा है:—

प्राची प्राची प्रदिशमार भेथामेतं लोकं श्रद्दधानाः सचन्ते।
यद् वाँ पक्वं परिविष्टमग्नौ, तस्य गुप्तये दम्पती सं श्रयेथाम्॥

"हे दम्पति! तुम पूर्व की ओर बढ़ो, उस स्वर्ग पर श्रद्धावान् ही चढ़ पाते हैं। तुमने जो पका हुआ ओदन अग्नि में रखा है, उसकी रक्षा के निमित्त स्थित रहो।"

उड्डीश तन्त्र में वशीकरण की सिद्धि के लिए पूर्वाभिमुख साधना करने का विधान बताया है—

जपेत्पूर्व मुखो वश्ये...............

सन्ध्या में पूर्व की ओर बैठने का प्रमुख कारण यह है कि पूर्व की ओर से सूर्य उदय होता है। सूर्य अग्नि और तेजस्विता का प्रतीक और प्राण शक्ति का महाभण्डार है, उसकी हर किरण में आरोग्य ओत्-प्रोत है। इसलिए सूर्य को स्थावर जङ्गम की आत्मा कहा जाता है। सूर्य से प्राण शक्ति को आकर्षित करने के लिए आवश्यक है कि उसकी ओर ही मुँह किया जाए। सूर्य शाम को पश्चिम की ओर चला, जाता है। इसलिए सायंकालीन साधना पश्चिम की ओर मुख करके की जाती है। अपनी प्राण विद्युत को विश्व की महानतम प्राण-विद्युत के स्त्रोंत सूर्य के अनुकूल प्रवाहित करने से साधना की सफलता में सुविधा रहती है। विपरीत धारा में चलने से कठिनाई स्वाभाविक है। ईसाई अपने गिरजाघरों के द्वार पूर्व की ओर ही रखते हैं। पारसी बोध और जैनियों की भी यही मान्यता है।

सायकालीन सन्ध्या पश्चिम की ओर मुख करके होती है क्यों कि सूर्य पश्चिम में अस्त होता है। जिधर सूर्य की दिशा होगी, उधर ही मुख करने का विधान है। प्रातः पूर्व की ओर सूर्य की ओर मुख करके साधना करने से जो लाभ प्राप्त होने चाहिए, वही लाभ सायं पश्चिम की ओर मुख करने से प्राप्त होने स्वाभाविक हैं।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

 CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

अथर्ववेद ३।२७।३ में पश्चिम दिशा का स्वामी वरुण को माना गया है। कहीं पश्चिम दिशा से अनुग्रह प्राप्त करने की आकांक्षा भी की गई है। अथर्ववेद ३।२६।३ में भी पश्चिम दिशा में देवताओं का निवास माना गया है। उड्डीस तन्त्र २।१४ में लिखा है कि धन प्राप्ति हेतु पश्चिम की ओर मुख करके साधना करनी चाहिए।

अथर्ववेद ३।२७।२ में दीक्षा दिशा के स्वामी इन्द्र को माना गया है। पितरों का उसी दिशा में नमस्कार किया है।

दक्षिणां दिशभिम नक्षमाणौ पर्यावर्तेथामिभू पात्रमेतत्।
नस्मिन वां यमः पितृभिः सविदानः पक्वार्थ शर्म।
बहुल्लंकियच्छात्।

'हे दम्पत्ति ! तुम दक्षिण की ओर जाकर इस पात्र की प्रदक्षिणा करते हुए आओ। उस समय पितरों से सहमत हुए यमराज तुम्हारे ओदन के लिए अनेक प्रकार के कल्याण प्रदान करें।

पितरों की दिशा दक्षिण है, पितृकर्म में दक्षिण की ओर ही मुख करने का विधान है। अन्य दिशाओं में पितरों का आवाहन उचित नहीं प्रतीत होता।। पूर्व की ओर सूर्य का प्रचण्डतेज होता है। अतः उनके आगमन में असुविधा रहेगी। यदि उत्तर की ओर मुख किया जाय तो दक्षिण की ओर से आने वाले पितरों की ओर से पीठ हो जाएगी। आते देखकर पीठ फेरना साधारण अतिथि का भी अपमान माना जाता है। फिर अपने पितरों का तो घोर अपमान है। अतः उत्तर दिशा उनके लिए प्रशस्त नहीं है। आचार्यों का मत है कि शिशुकुमार और ग्रह चक्र, की गतिविधियाँ पूर्व और पश्चिम के मध्य में सञ्चालित होती है। यह भी पितरों को प्रभावित करती है। शास्त्रों में पितृलोक की जो स्थिति स्वीकार की गई है, वह दक्षिण में चन्द्रमा से ऊपर की कक्षा में ही है। अतः वही दिशा उनके लिये विहित है।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal
अथर्ववेद ३।२७।४ में उत्तर दिशा के स्वामी सोम माने गए हैं। अथर्ववेद १२।३।१० में कहा है—

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

उत्तरं राष्ट्रं प्रजयोत्तरावद् दिशामुदोधी कृणवन्नो अग्रम् ।
पाङ्‌्वतं छन्दः पुरुषो वभूव विश्वैर्विश्वाङ्गैः सह संभवेम् ॥

'उत्तर दिशा प्रजाओं से युक्त है। यह श्रेष्ठ दिशा तप की श्रेष्ठता प्रदान करे। अतः उच्च आदर्शों की ओर बढ़ता अभीष्ट हो तो उत्तर की ओर मुख करके साधना करनी चाहिए। स्वाध्याय श्रेष्ठता की ओर प्रवृति करने वाला है। अतः इसका विधान भी उत्तर की ओर ही है। उत्तर में भी देवताओं का निवास माना गया है। देवायन उत्तर की ओर ही स्वीकार किया गया है क्योंकि उत्तरायण होने पर सूर्य का झुकाव इधर ही रहता है।

योगाभ्यास उत्तर की ओर प्रशस्त माना गया है—त्रिशिख ब्राह्मणोपनिषद् १८।१६ में कहा गया है—

ततः कालवशादेव ह्यात्मज्ञान विवेकतः ।
उत्तराभिमुखो भूत्वा स्थानात्स्थानान्तरं क्रमात् ॥
मूर्ध्न्यात्मनः प्राणन्योगाभ्यासं स्थितश्चरन् ।
योगात्संजायते ज्ञान ज्ञानाद्योगः प्रवर्तते ॥

"फिर काल प्रभाव से वह विवेक ओर आत्मज्ञान को प्राप्त होकर उत्तरामुख होकर एक दर्जा से दूसरे दर्जा को प्राप्त हो जाता है। तब वह अपने प्राणों को मूर्धा में धारण करके योगाभ्यास मे प्रवृत होता है। योग से ज्ञान ओर ज्ञान से योग की प्रवृत्ति होती है।

उड्डीश तंत्र ११४ मे कहा गया है—

...............विद्या दुत्तरे शान्तिकं भवत् ।
"आयुस्यरक्षा शान्ति ओर च पुष्टि वापिकारिस्यति ॥

"आयु रक्षा, शान्ति ओर पुष्टि कर्म के लिये उत्तर की ओर मुख करके जप करना चाहिए।"

ऋषि कर्म के लिए उत्तर दिशा इसलिये भी उपयुक्त मानी जाती है क्योंकि उधर ऋषियों की तपः स्थली हिमालय स्थित है जो

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

 CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

कि पर्वत समूहों का पिण्ड मात्र नहीं है। तप के प्रभाव से वह स्थान जीवित जाग्रत चेतना है। वहाँ साधना करने वाला अनुभव करता है जैसे वहाँ का सम्पूर्ण वातावरण ज्ञान और प्रकाश की रश्मियों से सिंचित है, उसका अन्तः करण भी उस प्रभा से आलोकित होने लगता है। इसलिये उन, निर्जीव शिलाखण्डों को शास्त्रकारों ने देवात्मा" कहा है' इसी देवात्मा की गोद में बैठकर ही ऋषियों ने अमर शास्त्रों का प्रणयन किया है, उनके मनन व चिनन वही परिपक्व हुए हैं, उनकी विचार—धारा का हरिशोधन उसी की अमूल्य देन है। अतः उच्च आदर्शों प्रस्त मनन, चिंतन, स्वाध्याय, योगाभ्यास के लिए उत्तर की ओर मुख प्रशस्त माना गया है।

गायत्री साधना में दिशा का विचार उपरोक्त नियमों के अनुसार ही होना उपयुक्त है। प्रातः काल पूर्व की ओर और सायंकाल को पश्चिम ओर मुख करके बैठना चाहिए।

सात्विक और असंक्रामक आसनों का उपयोग किया जाए

गायत्री साधना में आसन का विशेष महत्व है। बिना आसन के जप नहीं करना चाहिए। जिस आसन पर दूसरे व्यक्ति ने बैठकर जप किया हो, उस पर भी जप वर्जित माना है। अनेकों प्रकार के आसन ऋषियों ने साधना के लिए उपयुक्त माने हैं। कुशासन, मृग चर्म' व्याघ्र चर्म ऊन व रेशम के आसन, लकड़ी की चौकी गोबर का चौका आदि विभिन्न प्रकार के आसन अलग-अलग साधनाओं के लिए बताये गये हैं। मोक्ष और धन प्राप्ति के लिये काली मृगछाला और सभी प्रकार की Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal साधनाओं में ऊन, मृगछाला और कुशासन पवित्र माने हैं। ब्रह्माण्ड पुराण में कहा है—

 CC-0. Public Domain. Digitization by eGangotri

काम्यार्थं कम्बलं चैव श्रेष्ठं च रक्त कम्बलम् ।
कुशासने मन्त्रसिद्धिर्नात्रकार्या विचारणा ।।

'काम्य कर्म में कम्बल का आसन उपयुक्त माना जाता है। लाल कम्बल हो तो अतिश्रेष्ठ है। कुशासन पर साधना करने से मन्त्र सिद्धि अवश्य होती है।

बाँस पत्थर, भूमि, छिद्रयुक्त काष्ठ, तृण और पत्तों के आसन वर्जित है। उन पर बैठकर साधना करने पर निम्न हानियाँ होने की सम्भावना व्यक्त की गई है—

वैशागने तु दारिद्रयं पाषाणे व्याधिः सम्भवः ।
धरण्यांदुःख संभूति दौर्भाग्यं छिदिदारुजे ।
तृणेधनं, यशोहानिः पल्लवे चित्तविभ्रमः ।। (पञ्चरात्र)

"बाँस के आसन पर दारिद्र्य पाषाण पर व्याधि, भूमि पर दुःख, छिद्रयुक्त काष्ठ् पर दुर्भाग्य, तृण पर लक्ष्मी व यश की हानि और पत्तों पर चित्त भ्रम की सम्भावना रहती हैं।"

वस्त्र और कुर्सी के आसन को भी वर्जित माना गया है।

विभिन्न आसनों का वैज्ञानिक विवेचन इस प्रकार हैं—

साधना काल में आसन के प्रयोग का उद्देश्य यही नही है कि हमारे वस्त्र भूमि को स्पर्श न करें वरन इसलिये है कि साधना द्वारा उपार्जित शक्ति पृथ्वी में प्रवाहित न हो जाये और वह साधक के पास ही सुरक्षित रहे। भौतिक विज्ञान के गुरुत्वाकर्षण के सिद्धान्त के अनुसार पृथ्वी पर पार्थिव वस्तु को अपनी ओर खींचती है। यह सिद्धान्त 'न्यूटन' के नाम से विहित किया जाता है क्योंकि आधुनिक विज्ञान-वेत्ताओं को सबसे पहले इससे उन्होंने ही परिचित कराया। हमारे ऋषि तो इसे हजारों वर्ष पहले ही जानते थे जो इस आसन व्यवस्था से सिद्ध है।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

आसन उस वस्तु का बनाया जाता है जो असंक्रामक (नान—

 CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

कन्डक्टर) हो इसके पार्थिव विद्युत पृथ्वी में प्रवाहित नहीं हो सकती बिजली वाले बिजली की फिटिंग व मरम्मत करते हुए ऐसी वस्तुओं को माध्यम बनाते हैं जो असंक्रामक हो जैसे—रेशम, मिट्टी, चीनी रबड़, लकड़ी आदि। इनमें विद्युत दूसरी ओर प्रवाहित नहीं हो सकती। लोहा, पीतल आदि धातुएं ऐसी हैं जिन्हें संक्रामक (कन्डक्टर) की संज्ञा दी जाती है। यदि इन्हें माध्यम बनाया जाय तो विद्युत से हानि हो सकती है।

इसी सिद्धान्त को दृष्टि में रखते हुए कुश का आसन, मृगचर्म, व्याघ चर्म, ऊन का आसन, काष्ठ की चौकी और गोबर के चौके को पूजा-पाठ के कार्यों में प्रयुक्त किया जाता है क्योंकि वह असंक्रामक नान-कन्डक्टर गुण से युक्त है और पृथ्वी और साधक में एक ऐसे माध्यम का काम देते हैं जिससे शक्ति का प्रवाह नीचे की ओर न हो इसके विपरीत वस्त्र और पत्थर के आसन वर्जित माने गये हैं क्योंकि यह दोनों संक्रामक (कन्डक्टर) हैं। इससे पार्थिव विद्युत प्रवाहित हो सकती है। पत्थर पर घण्टों उपासना के लिये बैठा जाये तो उसके कड़ेपन के कारण गुदा सम्बन्धी रोगों की सम्भावना भी हो सकती है।

अब साधना के उपयुक्त आसनों का विवेचन किया जाता है। सर्व श्रेष्ठ कुश का आसन माना जाता है जो सर्वसुलभ और श्रेष्ठ है।

कुशासन :

हिन्दू धर्म के साधना विधान में कुशासन का महत्वपूर्ण स्थान है। वैसे अलग-अलग साधनाओं में भिन्न-भिन्न प्रकार के आसनों का विधान है। जैसे तमोगुणी साधना में ऊन का आसन बिछाया जाता है। सतोगुणी साधना में कुशासन का विधान है क्योंकि जिस प्रकार से पशुओं में गौ को पौधों में तुलसी को, उनके गुणों के कारण श्रेष्ठ माना जाता है, उसी प्रकार से घासों में कुश को श्रेष्ठ व पवित्र माना जाता

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

है। चाहे मृतक कर्म हो या शुभ कार्य हो कुश का प्रयोग अनिवार्य है। पारस्कर आदि गृहसूत्रों के अनुसार यज्ञों में कुशकण्डिका का विधान आता है। पिन्ड पितृ यज्ञ है पिण्डों के नीचे कुश रखी जाती है। कुश से अभिमन्त्रित जल का छिड़काव यजमान पर किया जाता है। कर्मकाण्ड में कुश के पवित्रे पहिने जाते हैं। महाभाष्कर पत्तञ्जलि मुनि ने लिखा है कि पाणिनि मुनि जब अष्टाध्यायी लिख रहे थे, उस समय वह हाथों में कुश के पवित्रे पहला करते थे। आयुर्वेद, शास्त्रों के अनुसार कुश को भूत बाधा निरोधक बताया जाता है।

कुश के शुद्धता और पवित्रता के गुण को निम्न वेद मन्त्र में दर्शाया गया है।

त्वं भूमिमत्येष्योजया त्वं वेद्यां सींदसि चारुरध्वरे।
त्वाँ पवित्रमृषुयोअभरंत त्वं पुनीहि दुरितान्यस्मद्॥
(१६,३३।३)

अर्थ—हे मणि रूप धर्म ! तू अहिंसित यज्ञ की वेदी में बैठने वाला, रमणीय और शोधक है। तुझे ऋषि अपनी शुद्धि के लिये धारण करते हैं। अतः हमें पापों से छुड़ा।

इससे स्पष्ट है कि कुश में ऐसी विशुद्ध शक्ति है कि उसके स्पर्श से उनके बांधने व कर्मकाण्ड में प्रयोग करने से साधक में पवित्र भावनाओं का संचार होता है। तभी तो पाप के विचारों के छुड़ाने की प्रार्थना की गई है।

कुश को वेदों में एक महान औषधि बताया गया है। वह रोग कीटाणुओं से रक्षा करने वाला और उनको नष्ट करने वाला है। तभी तो सूर्य और चन्द्र ग्रहण के समय जब रोग कीटाणु काफी संख्या में आकाश में इधर उधर घूमते हैं, खाने की वस्तुओं आदि में रोग कीटाणुओं से रक्षा व उनके नाश के लिये उनमें कुश का प्रयोग किया जाता है। बाल्मीकि रामायण में आता है कि जिस समय लव और कुश की

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

उत्पत्ति बाल्मीकि मुनि के आश्रम में होती है, उस समय ऋषि ने उन दोनों की रक्षा कुश द्वारा ही की थी। तभी उसका नामकरण ही इसी आधार पर हुआ है। कुश पर पूरे कुश का प्रयोग किया गया था, इस लिये उसका नाम ही कुश रखा गया। लव कुश के लव, एक भान से आरोग्य प्राप्त हुए थीं, इसीलिये उनका नाम ही लव रखा गया था। वेदों में भी कुश की आरोग्य शक्ति के सम्बन्ध में कई मन्त्र आते हैं।

"इस मणि को तेरे कुशल और वृद्धावस्था की अप्राप्ति के लिये बाँधता हूँ।"

बध्नामि जरसे स्वस्तये।
दर्भो य उग्र औषधिस्त ते वध्नाम्यायुषे।

(अथर्व १९।३२।१)

इस प्रचण्ड वीर्य औषधि को तेरी आयु वृद्धि के निमित बाँधता हूँ।

कुश में रोगी की मृत्यु पाश से भी मुक्त करने का संकेत वेद में किया गया है।

(अथर्व १६।३२।२)

नास्य केशन प्रोनोरसिवयन्ति ताडमा घ्नते।
यस्या अच्छिन्नपर्णेन दर्भेण शर्म यच्छति॥

अर्थ—"प्रयोग करने वाला पुरुष जिस भयभीत पुरुष की पर्ण युक्त पूर्णाङ्क दर्भ मणि को बाँधता है। यमदूत उसके केशों को नहीं उखाड़ते और न उसके हृदय पर घूँसा मारते हैं।

वेदों में कुश से सम्बन्धित औषधि निर्माण शास्त्र के एक महत्व पूर्ण सिद्धान्त की ओर सकेत किया गया है।

[illegible]
Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal
तमस्नै विश्वे त्वां देवा जसते भर्नवा अधुः॥

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

अर्थ—हे दर्भ ! तुझमें दूसरों को पीड़ित करने वाली सैकड़ों गाँठें हैं और उन पीड़ाओं को दूर करने के भी सैकड़ों प्राक्रम हैं। तुझ कवच रूप को इस रक्षा काम्य राजा के लिए देवताओं जरां नाशनार्थ दिया है, इसलिये इसकी वृद्धावस्था को दूर करती हुई तू इसे पुष्ट कर।

होम्योपैथिक विज्ञान का आधार भी प्राचीन वैदिक विज्ञान पर है। उसकी औषधि निर्माण का भी यही सिद्धान्त है कि जो औषधि शरीर में बिगाड़ उत्पन्न करने की क्षमता रखती हैं, वही शरीर को आरोग्य प्रदान कर सकती हैं। उसी प्रकार से कुश को भी बिगाड़ पैदा करने वाला और निरोगता प्रदान करने वाला बताया गया है।

साधना से तो अन्त:करण पवित्र होता ही है पवित्रता, शुद्धता और निरोग्यता के गुणों को धारण करने वाले, कुश के आसन पर बैठने वाले साधक को अपने लक्ष्य की पूर्ति में सहायता मिलती है क्योंकि कुश तो पवित्रता का प्रतीक ही है। कुश में व्याप्त विद्युत केवल साधक पर पवित्र विचारों की छाप ही नहीं डालती वरन् उसमें दो गुण और भी है। कुशासन साधक और पृथ्वी के बीच एक दीवार का काम करता है। उसमें पृथ्वी की विद्युत को रोकने की शक्ति है। इससे साधक के ध्यान में कोई विघ्न नहीं आता। यदि आसन न बिछाया जाय, तो इससे विघ्न की सम्भावना होती है। एक लाभ और है। जप और ध्यान साधना के द्वारा साधक में जो शक्ति उत्पन्न होती हैं, उसका पृथ्वीकरण न हो जाय, उसकी विद्यु त पृथ्वी में चली जाये, कुशासन उस विद्युत को रोकने का काम करता है। कुशासन के अभाव में शक्ति का प्रवाह नीचे की ओर हो सकता है। शक्ति के प्रवाह को जिस तरह ऊपर शिखा बन्धन से रोका जाता है। उसी प्रकार नीचे कुशासन के प्रयोग से उसका विरोध किया जाता है।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

शास्त्रीय व वैज्ञानिक दोनों दृष्टियों से कुश की महत्ता प्रतिपादित है। अतः इसका प्रयोग हर प्रकार से लाभदायक ही सिद्ध होगा।

मृगचर्म–

काले मृगचर्म को यजुर्वेद ने समस्त पुण्यों का जनक माना है—

कृष्णाजिनं वैसुकृतस्य योनिः।

गीता ६।११ में मृगचर्म को बिछाने का आदेश दिया गया है। शास्त्र ने काले मृगचर्म से ज्ञान की सिद्धि होना बताया है :—

स्वामी दयानन्द ने संस्कार विधि में भी अखण्डित काला मृग चर्म बिछाने के लिए लिखा है—

मृगचर्म आसन में कई लाभ हैं। मृगों की तेजस्विता के कारण उन्हें पवित्र माना जाता था। तभी ऋषियों के आश्रमों में उनका निवास रहता था। इस आसन को प्रयुक्त करने वाले में भी तेजस्विता की वृद्धि होती है।

कृष्णाजिनमखण्डनम्।

मृगचर्म असंक्रामक है। इससे पार्थिव विद्युत प्रवाहित नहीं हो सकती है। अतः यह साधक की शक्ति को सुरक्षित रखने की क्षमता रखता है।

मृगचर्म पर बैठने से इतनी शीलता का अनुभव होता है कि कामोत्तेजना दबी रहती है। ध्यान में कोई काम विकार न उत्पन्न हो जाये, इसलिए इनकी शान्ति की व्यवस्था होनी चाहिए। इसलिए ब्रह्मचारी, वानप्रस्थी और संन्यासियों के लिए विशेष प्रकार से यह विहित किया गया है। यज्ञोपवीत के समय ब्रह्मचारी जो मृगचर्म ओढ़ने का आदेश है। यह कामोत्तेजना को इतना दबाता है कि नपुंसकता की भी सम्भावना हो सकती है। अतः गृहस्थों के लिये या जिन ब्रह्मचारियों को गृहस्थाश्रम में प्रविष्ट होना है, यह हानिकारक

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

प्रसिद्ध हो सकता है। इसलिए उस पर कुश अथवा रेशम का आसक्त बिछाना उपयुक्त रहता है।

मृगचर्मासन पर बैठने से अर्श और भगन्दर रोगों में लाभ होते देखा गया है। आयुर्वेद ग्रन्थों में इसकी बहुत प्रशंसा है।

जाङ्गला मृगा: कषाया मधुरा लघवो वापतित्तापाहः
तीक्ष्णा हृद्याः वस्तिशोधनाश्च ।

(सुश्रु त० सूत्र स्थान ४६ अ०)

इस तरह से मृग को कषाय और मधुर गुण वाला बताया है जो वात और पित्त को नष्ट करता है और रक्त विकार को दूर करता है। खूनी बवासीर और भगन्दर जैसे कष्ट साध्य रोगों में वात पित्त से ही खून में दबाव बढ़ता है। मृगचर्म से वात पित्त का नाश होता है। अतः इन रोगों में लाभ होना होता कोई बड़ी बात नहीं है।

विज्ञान की दृष्टि में अर्श आदि रोगों में लाभ पहुँचने का स्पष्टीकरण इस प्रकार है :—

मृगचर्म में विशिष्ट प्रकार की विद्युत तरंगें होती हैं जो प्रयोक्ता के स्नायु मण्डल को प्रभावित करती हैं। गुहा में स्थित स्नायु मण्डल इस उद्देश्य की पूर्ति करता है। यह नाभि के प्रधान केन्द्र से सम्बन्धित है। अर्श का अधिष्ठान करने वाली 'महाप्रचीरा' नामक नाड़ी का सम्बन्ध इस साभि मण्डल से ही है। यहीं पर 'गृहणी' 'कला' की नाड़ी का निवास है जो पित्त को धारण करती है, और अग्नि का अधिष्ठान मानी जाती है। मृगचर्म की विद्युत तरंगें गुदा के स्नायु मण्डल से नाभि केन्द्रों को और नाभि केन्द्र को 'महाप्रचीरा' को प्रभावित करती है जिससे अर्श में लाभ होता है। यह केवल सिद्धान्त मात्र नहीं है। अनेकों वैद्यों ने इसका प्रयोग किया और सफलता व ख्याति प्राप्त की है।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

प्रश्न यह हो सकता है कि धार्मिक कार्यों में पशुओं के चर्म का उपयोग क्यों ? इसका उत्तर यह है कि मृग चर्म अपने मरे हुए मृगों का ही विहित माना गया है। मारे हुए मृगों का नहीं। फिर भी गुण और उपयोगिता को दृष्टि में रखते हुए कुछ अपवाद भी ऋषियों ने स्वीकार किये हैं परन्तु वह अपवाद विशुद्ध वैज्ञानिक आधार पर दिखाई देते हैं, अन्धविश्वास पर नहीं। जैसे वीर्य स्पष्टत: अपवित्र होते हुए भी उससे होने वाला पुत्र पवित्र माना जाता है। पशु अशुद्धा संज्ञा में आते हैं परन्तु गाय को माता के उच्च पद से विभूषित किया गया है। उसके मुख को फिर भी अशुद्ध माना गया है। मूत्र अपवित्र माना जाता है परन्तु गोमूत्र की वैज्ञानिक स्थिति अद्भुत है। अत: वह पवित्र हैं। विष्ठा अशुद्ध वस्तुओं की कोटि में आता है परन्तु गोबर का लिपा चौका पवित्र माना जाता है। मृग और व्याघ्र चर्म को पविश्र मानने का कारण भी उनमें पवित्र–विद्युत शक्ति की विद्यमानता है। कीड़ा अपवित्र है परन्तु तदुत्पन्न रेशम पवित्र है। उसका प्रयोग धार्मिक अनुष्ठानों में शुद्ध माना जाता है क्योंकि वह असंक्रामक है और विज्ञान की दृष्टि में उपयोगी है। बमन प्रत्यक्ष अशुद्ध है परन्तु शहद एक उपयोगी व पौष्टिक खाद्य पदार्थ व उत्तम औषधि मानी जाती है। इसलिये मृग चर्म व व्याघ्र चर्म ऊपरी दृष्टि से हमें अपवित्र दिखाई देते हैं परन्तु वास्तव में वह पवित्र है। उनके उपयोग में कोई हानि नहीं है, लाभ ही है।

व्याघ्र व सिंह चर्म–

अनुसंधान से पता चला है कि इन दोनों में राजसिक विद्युत प्रवाहित होती है। इस पर साधना करने से पुरुषार्थ और तेजस्विता का विकास होता है जो क्षत्रित्व का गुण है। इसलिए प्राचीन काल में जब राज्याभिषेक होता था तो सिंह चर्म को आसन के रूप में प्रयुक्त किया जाता था। अनुसन्धान से यह भी पता चला है कि मरने के

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

बाद भी उसके चर्म में उसके स्वाभाविक गुण विद्यमात रहते हैं। इसी मान्यता के अनुसार व्यवहार में यह देखा गया है कि व्याघ्र व सिंह चर्म के आसन के निकट सर्प—वृश्चिक न अन्य विषैले कीट नहीं आते। अतः साधक निर्विघ्न रूप से ध्यान, समाधि व अन्य साधनाएँ कर सकता है।

रेशम व ऊन के आसन—

गीता (६।११) में नीचे रेशम के वस्त्र बिछाकर ऊपर मृग चर्म बिछाने का आदेश दिया गया है। अथर्ववेद (१८।२।४३) में ऊन के आसन का वर्णन आता है। काम्य कार्य में लाल कम्बल के आसन के उपयोग का परामर्श शास्त्रों ने दिया है इसका कारण यह है कि यह दोनों असंक्रामक (नान—कन्डक्टर) साधना में उपार्जित विद्युत इन पर बैठने से पृथ्वी में प्रवाहित नहीं हो सकती व सुरक्षित रहती है।

उपरोक्त आसनों में से अपनी साधना के अनुरूप आसन का चुनाव किया जा सकता है।

—x—

जप साधना में माला की उपयोगिता

महिमा—

मन्त्र साधना में माला का एक विशिष्ट स्थान है क्योंकि जप माला के ही माध्यम से उपयुक्त माना जाता है। माला जप संख्या की गिनती के लिए होती है। गिनती के लिए मिट्टी, अक्षत धान्य पुष्प, चन्दन, अँगुलियों के पर्वों का निषिद्ध किया गया है परन्तु रक्त चन्दन, सिन्दूर, लाक्षा और शुष्क गोमय को मिलाकर इनके चूर्ण की गोलियों से संख्या गिनने की छूट दी गई है। किन्हीं आचार्यों का मत है कि इन गोलियों का प्रयोग पुरश्चरण काल में ही होना चाहिए। माला जप की

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

श्रेष्ठ माध्यम है। साधना में मन का इधर-उधर घूमना स्वाभाविक है क्योंकि यह उसका स्वभाव है। यदि माला न ली जाये तो जप बीच में बन्द भी हो सकता है। माला तो निरन्तर घूमती रहेगी और मन को फिर अपने स्थान पर ले आयेगी। माला से मन की एकाग्रता में कोई बाधा नहीं आती है।

श्रद्धा और विश्वास उपासना के आवश्यक अंग हैं। माला के प्रति भी यही उच्चभाव रखना अभीष्ट है। चाहे जिस तरह भी उसका प्रयोग करना रखना, पैर तक लटकाये रहना, बायें हाथ से गिनने लगना, अशुद्ध अवस्था में भी रखे रहना, किसी भी वस्तु से बना कर गूँथ लेना उचित नहीं माना गया है। भले ही वह जड़ वस्तु हो परन्तु वह भगवान् के स्मरण का माध्यम है। और आध्यात्मिक प्रगति में सहायक होती है। इसलिए उसके प्रति श्रद्धा रखनी चाहिए। हमारी संस्कृति है जब लाभकारी अन्य जड़ वस्तुओं की समय-समय पर पूजा होती है। तो क्यों नहीं माला को उसी पवित्र और उच्च दृष्टि से देखा जाये जो साधक को भगवान की ओर ले जाती है।

शास्त्र का वचन है :—

अंगुलीगण नादेकं पर्वण्यष्टगुणं भवेत्।
पुत्रजीवैर्दशगुणं रतं शंखैः सहस्रकम्॥
प्रवालेर्मणिरत्नैश्च दशसाहस्रिकं स्मृतम्।
तदेव स्फाटिकैः प्रोक्तं मौक्तिकैर्लक्ष मुच्यते॥
पद्माक्षैर्दशलक्षं स्यात सौवर्णैः कोटिरुच्यते।
कुशग्रन्था कोटिशतं रूद्राक्षैः स्यादनन्तकम्॥
सर्वोविरता माला नृणां मुक्तिफलप्रदा।

'अँगुलियों पर जप करने पर फल एक गुना, अँगुली के पर्वों पर आठ गुना, [illegible] की माला से दश गुना, शंख की माला से सौ गुना, मूँगे की माला से सहस्र गुना, मणि और रत्न की माला ने

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

दश हजार गुना, स्फटिक की माला से दश हजार गुना, मोतियों की माला से लाख गुना, कमल की माला से दश लाख गुना, सोने की माला से करोड़ गुना, कुश मूल से बनी माला से सौ करोड़ गुना और रुद्राक्ष द्वारा निर्मित माला से जप करने पर अनन्त फल प्राप्त होता है। यह सब प्रकार की मालायें साधक को मोक्ष लाभ देती हैं।"

प्रकार—

माला तीन प्रकार की होती हैं। १. मणिमाला, २. करमाला ३. वर्ण माला।

१. सूत्र में मणियों के पिरोये जाने के कारण इसे मणिमाला कहा जाता है। अधिक के लिये यही उपयुक्त रहती है। यह अनेक प्रकार की वस्तुओं से निर्मित की जा सकती है। तुलसी, रुद्राक्ष जीव पुत्रक, शंख, पद्म बीज, सोना, मणि, रक्त चन्दन, चाँदी, मोती, स्फटिक, कुश मूल आदि से वह प्रायः बनाई जाती हैं। शाक्त शैव और स्मार्त रुद्राक्ष को और वैष्णव तुलसी की माला को श्रेष्ठ मानते हैं।

शास्त्रों में विभिन्न उद्देश्यों की पूर्ति के लिए अलग-अलग मालाओं का विधान है। यथा—

पद्माक्षैर्विहिता माला शत्रूणां नाशिनी मवा।
कुशग्रन्थिमयी माला सर्वपापप्रणाषिनी॥
पुत्रजीवफलैः क्लृप्ता कुरुते पुत्रसम्पदम्।
निर्मिता रोप्यमणिभिर्जपमालेप्सितदा॥
प्रवालैर्विहिता माला प्रयच्छेद्विपुलं धनम्।

"शत्रुनाश के लिए कमल गट्टे की माला, सर्वपाप नाश के लिए कुश मूल की माला, पुत्र प्राप्ति के लिए जीव पुत्रक की माला, इच्छित फल की प्राप्ति के लिए चाँदी की माला और अपार लक्ष्मी की उपलब्धि के लिए मूँगे की माला से जप करना चाहिए।"

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

वाराही तन्त्र के अनुसार—

सुवर्ण मणिभिर्माला स्फाटिकी शंखनिर्मिताम् ।
प्रवालैरेव वा कुर्यात्पुत्रजीव: विवर्जयेत् ।।
पद्माक्षंचैव रुद्राक्षं भद्राक्ष चै विशेषत: ।

"भैरवी विद्या के लिये सोने, मणि, स्फटिक, शंख और मूंगे की माला का प्रयोग करना चाहिए । जीव पुत्रक: कमल गट्टे, रुद्राक्ष की माला वर्जित है ।

त्रिपुरामन्त्रजपादौ तु रक्तचन्दनबीजादिभि: प्रशस्ता ।
रक्तचन्दनमाला तु भोगमोक्षाप्रदा भवेत् ।।

'त्रिपुर सुन्दरी की साधना में लाल चन्दन बीच माला श्रेष्ठ मानी गई हैं । यह भोग और मोक्ष दोनों को प्रदान करने वाली है ।

वैष्णवे तुलसी माला गजदन्तैर्गणेश्वरे ।
त्रिपुराया जपे शस्ता रुद्राक्षं रक्तचन्दनै: ।।

वैष्णव साधना में तुलसी की, गणेश साधना में गजदन्त की त्रिपुरा साधना में रुद्राक्ष और चन्दन की माला प्रशस्त मानी गई है ।"

२. करमाला—अंगुलियों पर किये जाने वाले जप को करमाला जप कहते हैं । यह दो प्रकार का है । एक तो अंगुलियों से गिना जाता है और दूसरा उनके पर्वों से । शास्त्र दूसरे प्रकार के जप का अनुमोदन करता है । अत: वही विहित है । उसके नियम व विधि इस प्रकार है :—

अंगुलीर्न वियुज्जीत किञ्चिदाकुञ्चिते तले ।
अंगुलीनां वियोगाच्च छिद्रे च स्रवते जप: ।।

"जप करते समय अलग-अलग नहीं करना चाहिए, इससे जप निष्फल जाता है । अंगुलियों को मिलाकर हथेली की तरफ कुछ झुका कर जप करना चाहिए ।"

अंगुल्यग्रे च यज्जप्तं यज्जप्तं मेरुलङ्घनात् ।
Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal
पर्वसन्धिषु यज्जप्त तत्सर्वं निष्फलं भवेत् ।।

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

"अंगुली के अग्रभाग से पर्व की लकीर और सुमेरू का उल्लंघन नहीं करना चाहिए। इससे फल निष्फल जाता है। मध्यमा का मूल तथा बीच का पर्व सुमेरू कहा जाता है।

पर्वभिस्तु जयेद्देवीं माला काम्यजते स्मृता।
गायत्र्या वेदमूलत्वाद्वेदः पर्वसु गीयते॥

—गायत्री कल्प

"काम्य जप तो माला पर ही करना चाहिए। गायत्री का जप पर्वों पर भी किया जा सकता है क्योंकि गायत्री का मूल वेद हैं और वेद का गायन पर्वों पर ही होता है।'

गायत्री तन्त्र में करमाला की विधि इस प्रकार वर्णित है :—

देव मन्त्र जाप की करमाला

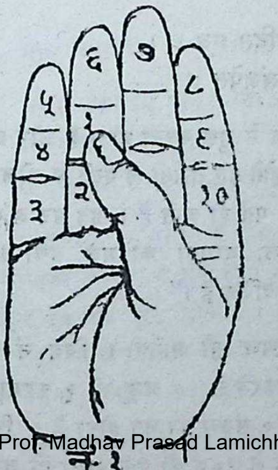

नं. १

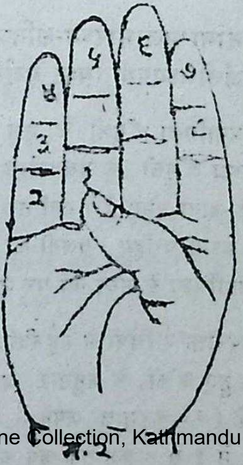

नं. २

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

आरभ्यान मिका मध्यं पर्वाण्युक्तान्यनुक्रमात् ।
तर्जनीमूलपर्यन्त जपेददशसु पर्वसु ॥
मध्यमांगुलिमूले तु यत्पर्व द्वितीयं भवेत् ।
तं वै मेरूं विजानीय ज्जाप्येतं नातिलङ् घरेत् ॥

—गायत्री कल्प

"अनामिका अँगुली के मध्य के पर्व से शुरू करके क्रम से कनिष्ठका अँगुली के मूल पर्व से होते हुए तर्जनी अँगुली के मूल तक जाना होता है। यहाँ तक १० पर्व हो जाते हैं। इन पर अँगूठे से जप करना चाहिए। मध्यमा का मूल और मध्य के पर्व सुमेरु का उल्लंघन नहीं करना चाहिए पुनः जपते समय सुमेरु के नीचे से अँगूठा ले जाना होता है।"

१०८ मन्त्र जप के लिए १० बार इस प्रकार करें। ८ की विधि इस प्रकार है :—

अनामा मूलामारभ्य कनिष्ठादित एव च ।
तर्जनीमध्यपर्यन्तमष्ट सर्वसु संजपेत् ॥

"अनामिका अँगुली के मूल पर्व से शुरू करना होता है और क्रम से कनिष्ठा अँगुली के मूल पर्व से होते हुए तर्जनी अँगुली के बीच के पर्व तक जाना होता है। यहाँ तक ८ पर्व हो जाते हैं। इन पर अँगूठे से जप करना चाहिए। तर्जनी का मूल, मध्यमा का मूल तथा मध्य और अनामिका के मध्य पर्व पर जप वर्जित हैं।"

उपरोक्त २ चित्रों से यह विधि स्पष्ट हो जायेगी। चित्र नं० १ में दिये हुए अंकों के अनुसार जप करने से १० अङ्क की १ करमाला होती है। १० करमाला जपने से १०० संख्या का जप होता है। चित्र नं० २ में १ से ८ क्रम तक जप करने से १०८ की एक माला हो जाती

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

शक्ति मन्त्र जाप की करमाला

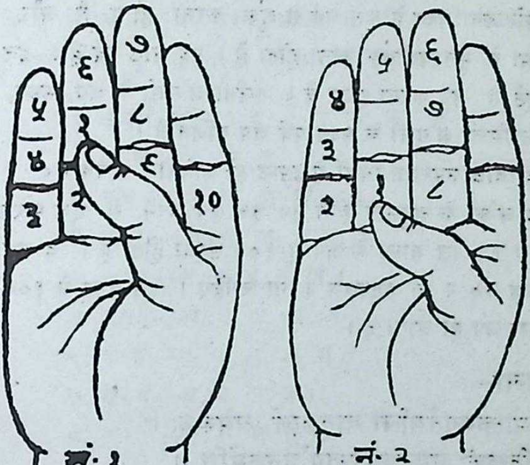

नं. १ नं. २

शास्त्रीय विधि इस प्रकार है—

अनामिकात्रयं पर्व कनिष्ठां च त्रिपर्विका ।
मध्यमायाश्चत्रितयं तर्जनी मूलपर्वणि ।
तर्ज्न्यग्रने तथा मध्ये जपेत् सतु पापकृत् ।

'अनामिका अंगुली के बीच के पर्व से शुरू करना होता और क्रम से कनिष्ठा अंगुली के मूल तथा मध्यमा के मूल पर्व से होते हुए तर्जनी के मूल पर्व तक जाना होता है । यहाँ तक १० पर्व हो जाते हैं । इन पर अंगूठे से जप करना चाहिए । यहाँ तर्जनी का बीच का व अग्रपर्व सुमेरु माना जाता है । इन पर करना वर्जित है ।"

यह एक करमाला हुई । १०८ जप के लिए करमाला जप करके ८ जाप इस प्रकार करें ।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

अनामामूलमारभ्य प्रादक्षिण्य क्रमेण च।
मध्यमामूल पयन्तमष्ठपर्वसु संजपेत् ।।

इसमें अनामिका के मूल पर्व से शुरू करना होता है और क्रम से मध्यमा के मूल पर्व तक जाना होता है। यह आठ पर्व है। इन पर भी अँगूठे से जप करना होता है। तर्जनी अँगुली के अग्र, मध्य, मल और अनामिका अँगुली के मध्य पर्व जप वर्जित है।

यह विधि उपरोक्त चित्रों से स्पष्ट हो जायेगी। चित्र नं० १ में दिये गये अंकों के अनुसार १ से १० तक जप करने से एक करमाला होती है। १० कर माला के जप से १०० संख्या होती है। ८ जप के लिए चित्र नं० २ का अनुकरण करना चाहिए। इस तरह से १०८ की एक माला जप हो जाता है।

वर्णमाला—

क्रमोत्क्रमगतैर्माला मातृकार्णै क्षमेरूकः।
सविन्दुकैः साष्टवर्गैरन्तर्यजनकर्मणि ।।
आदि कु चु टु तु पु शावोऽष्टौ प्रकीर्त्तिताः।
अंकारदिवर्णान् प्रत्येकं सविन्दु कृत्वा शतं ।।
संजप्य अकारादीनां वर्णानां कवर्गदानाञ्चन्य।
वर्ण सानुस्वारं कृत्वा पूर्वसुच्चार्य जपः कर्त्तव्यः ।।
अनेन प्रकारेणाष्टोत्तरशतसंख्यजपो भवति।
अन्तर्यजन इत्युपलक्षणम् ।।
सबिन्दु वर्णमुच्चार्य पद्यामन्त्रं जपेद्बुधः।
अकारीदीक्षकारान्तं विन्दुयुक्तं विभाव्य च।
वर्णमाला समाख्याता अनुलोमविलोमिका ।।

सनत्कुमार तन्त्र में इसको विधि इस प्रकार दी है—

"सनत्कुमार तन्त्र में वर्णित है। कि 'अ' से 'क्ष' तक के वर्णों को वर्णमाला कहा जाता है। इन ५१ वर्णों से 'अ' से 'ह' तक पञ्चादश

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

वर्णमाला कहलाती है और 'क्ष' इस माला का मेरु माना जाता है। इन सारे वर्णों में अनुस्वार जोड़कर अनुलोम—विलोम क्रम से अर्थात् 'अ' से 'ह' से 'अ' तक जप करना चाहिए। यही माला अन्तर्यजन में श्रेष्ठ मानी जाती है। वर्णमाला ८ वर्णों में विभाजित है—

१. अवर्ग–अ, आ, इ, ई, उ, ऊ, ऋ, ॠ, लृ, लॄ
ए, ऐ, ओ, औ, अं, अः।
२. कवर्ग—क, ख, ग, घ, ङ्।
३. चवर्ग—च, छ, ज, झ ञ।
४. टवर्ग—ट, ठ, ड, ढ, ण।
५. तवर्ग—त, थ, द, ध, न।
६. पवर्ग—प, फ, ब, भ, म।
७. यवर्ग—य, र, ल, व।
८. शवर्ग—श, ष, स, ह।

इस वर्णमाला के जप करने का नियम इस प्रकार है—

अकारादि वर्ण के हर वर्ण में अनुस्वार लगाकर एक-एक वर्ण के बाद एक-एक बार इष्ट मन्त्र का पाठ करते हुए जप करना चाहिए इस तरह १०८ बार जप करना श्रेष्ठ माना जाता है। अन्तर्यजन में तो वर्णमाला से जप होना ही है, बाह्य पूजा में भी इसका उपयोग हो सकता है। पहले "अं" बोलकर एक बार मूल मन्त्र का एक बार जप करना चाहिए। इसी तरह 'ह' तक अनुस्वार सहित पाठ करते हुए प्रत्येक के बाद के मूल मन्त्र का एक-एक बार जप करना चाहिये। फिर 'ह' से लेकर 'अ' तक एक-एक वर्ण के बाद एक-एक मन्त्र का जप करे। यही वर्णमाला जप कहलाता है।

चरमार्णं मेरुरूपे लङ्घनं नैव कारयेत्।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

विशुद्धेश्वर के तन्त्र के अनुसार—

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

"समस्त वर्णों के अन्तिम अक्षर 'क्ष' को माला मेरु माना जाता है। अतः जपकाल में उसका उल्लंघन उचित नहीं है।

मालिनी विजय तन्त्र में लिखा है—

अन्तर्विद्रु मभासमानभुजगीं सुप्तोत्थवर्णोऽज्ज्वला।
मारोहप्रतिरोहतः शतमयीं वर्गाष्टकाष्टत्तराम्॥

"प्रवाल की तरह प्रभा वाली सूत्र रूपा निद्रिता सर्वाकारा कुल कुण्डलिनी शक्ति ही वर्णमाला का सूत्र है। उसके आरोहण-अवरोहण से शत संख्या और अष्ट संख्या होती है।

वैशम्पायन संहिता में लिखा है—

प्रलयानलतः पूर्वा रुद्ररूपेण मूर्त्तिना।
उद्धतं पृथिवी वीजमतोऽन्ते तु नियोजयेत्॥
प्रलयोद्धरित बीजं लकारमनलात्पुनः।
द्विलकार विधावत्र परन्ते नियोजयेत्॥

"प्राचीनकाल में रुद्र रूपी महादेव ने पृथ्वी का उद्धार करते समय पृथ्वी बीज 'ल' कार का भी उद्धार किया था। इसलिए प्रलय-काल में प्रलयाग्नि से उद्घृत उक्त 'ल' कार को लेकर वर्णमाला में दो 'ल' वर्ण विद्यमान हैं। इसलिए वर्णमाला में 'ह' कार के बाद 'ल' का एक बार फिर पाठ होता है।"

माला में १०८ दाने क्यों ?

सब कार्यों में काम आने वाली माला में १०८ दाने होते हैं। माला में १०८ दाने होने के भी अनेकों कारण हैं।

एक पल में हमारे ६ श्वास निकलते हैं, ढाई पल या एक मिनट में १५ एक घण्टे में ९०० । इस तरह से १२ घण्टे में १०८००। इस सम्बन्ध में चूड़ामणि उपनिषद् ।२२।३२। में एक श्लोक भी आता है।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

षटशतानि दिवारात्रौ सहस्राण्येक विंशतिः।

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

एतसंख्यात्मकं मन्त्रं जीवो जयति सर्वदा ॥

इस हिसाब से दिन और रात प्रत्येक के श्वासों की संख्या १०८०० होती है, यदि विश्राम, भोजन व अन्य सांसारिक कार्यों के लिये आधा समय छोड़ दिया और आधा समय ही ईश्वर उपासना में लगाया जाय तो अपने इष्टदेव का १०८०० बार स्मरण करना चाहिए। उपांशु जप का फल शास्त्रों में १०० गुना बताया गया है। इसलिए १०८ बार के जप करने से १०८०० बार के जप का फल मान लिया जाता है। इसलिए माला के दानों की संख्या १०८ रखी गई है।

प्रकृति विज्ञान के अनुसार नक्षत्र २७ होते हैं। प्रत्येक नक्षत्र के चार पद होते हैं। २७ को ४ से गुणन करने से संख्या १०८ ही होती है। दूसरे शब्दोंमें यह संख्या एक प्रकार से सारे संसार का प्रतिनिधित्व करती है।

ब्रह्म का अंक शास्त्रों में ९ माना गया है जिसका परिवर्तन नहीं होता। जैसे ९×१=९ ९×२=१८ (१+८=९) ९×३—२७ (२+७=९), ९×४=३६ (३+६=९)। युगों की संख्या भी ऐसी ही है। सतयुग के १७२८०० वर्ष हैं जिसमें १+७+२+८ योग १८ और १+८=९ होता है। त्रेता युग में १२९६००० वर्ष हैं। इनके अङ्कों योग १+२+९+६=१८ (१+८=९) हैं। द्वापर युग में ८६४००० वर्ष हैं। इनके अङ्कों का योग भी ८+६+४=१८ (१+८=९) होता है। कलियुग में ४३२००० वर्ष हैं इसके अंकों की संख्या ४+३+२=९ होती हैं। कल्प में ४३२०००0००० वर्ष होते हैं, इनके अंकों का जोड़ भी ९ होता है। ब्रह्मा का एक वर्ष [illegible] वर्षों का होता है। इसके अंकों का जोड़ भी ९ ही है।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

नक्षत्र २७ होते हैं यह संख्या भी (२+७=९) नौ का गुणन है। गायत्री मन्त्र में व्याहृतियों सहित २७ अक्षर होते हैं (२+७=९)। यह भी ९ का गुणा है। गिनती कुल अंक भी ९ होते हैं। शरीर के छिद्रों की संख्या ९ है। नवरात्रि में ९ दिन का व्रत, अनुष्ठान किया जाता है। कार्तिक शुक्ला नवमी अक्षय नवमी होती है। यह ९ का अंक ब्रह्म का प्रतीक है। इसको हमारे धर्मशास्त्रों में अत्यन्त शुभ माना गया है। इसी शुभ संख्या का ध्यान में रखते हुये महर्षि व्यासजी ने १८ पुराण १८ उपपुराण लिखे। महाभारत के पर्वों की संख्या १८ रखी। गीता के अध्यायों की संख्या भी १८ है। भागवत के श्लोकों की संख्या १८००० हैं। यह सभी अंक ९ के गुणा ही हैं। १०८ के अंकों का जोड़ भी (१+८=९ ही) ९ होता है। इसलिये इसे शुभ माना जाता है। ब्रह्म से सम्बन्धित होने के कारण ब्रह्मलीन सन्यासियों को "श्री १०८" के नाम से सम्बोधित करते हैं।

हमारे शास्त्रों में सूर्य उपासना का महत्वपूर्ण स्थान है। सूर्य की १२ राशियाँ होती हैं। यजुर्वेद (३२।१) में सूर्य को ब्रह्म रूप माना गया है। ब्रह्म का अंक हैं ९ सूर्य का १२। इनका गुणनफल १०८ ही होता है। इसलिए ईश्वर उपासना के लिए यह १०८ संख्या अत्यन्त शुभ है। जप का माध्यम होना है। माला इसलिए इसके दोनों की संख्या भी १०८ रखी गई है।

माला निर्माण—

मुण्डमाला तन्त्र में लिखा है—

अन्योन्यसमरूपाणि नातिस्थूलकृशानि च।
कीटादिभरदुष्टानि न जीर्णानि नवानि वै॥

"जिन मणियों की माला बनानी हो, वे सब समरूप हों, अधिक बड़ी अथवा अधिक छोटी न हों, कीड़ों आदि से खाई हुई न हों और जीर्ण न हों, ऐसी मणियों को माला बनानी चाहिए।"

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

गोतमीय तन्त्र का आदेश है—

पञ्चशन्मणिभिर्माला त्रिशाद्भिधनेसिद्धये ।
सर्वार्थीः सप्तविंशत्या पंचदश्याभिचारिके ।।
पंचाशाद्भिः काम्यसिद्धिः स्यात्तथा चतुरोत्तरैः ।
अष्टोत्तरशतैः सर्वं सिद्धिरुक्ता मनीषिभिः ।।

'पञ्चाशन्मणि की माला बनानी चाहिए परन्तु धन प्राप्ति के कार्य में तो मणि सभी इच्छाओं के साधन करने में २७ मणि, मारणादि अभिचार में १५, काम सिद्धि में २४ और सभी प्रकार के कार्यों की सिद्धि के लिए १०८ मणियों की माला बनानी चाहिए। ऐसा मनीषियों का कहना है।'

माला में यदि ब्राह्मण कन्याओं द्वारा बनाया हुआ सूत हो तो श्रेष्ठ है। विभिन्न प्रकार के कार्यों में अलग-अलग रङ्गों के सूत प्रयुक्त किये जाते हैं। यथा—अभिचार में कृष्ण, वशीकरण में लाल, शान्ति कर्म में सफेद, मुक्ति अथवा धन प्राप्ति के लिए रेशमी सूत की माला बनाई जाती है। लाल रङ्ग का सूत सभी प्रकार के अनुष्ठानों में प्रयुक्त किया जा सकता है।

जिस सूत से माला बनानी हो, उसे तिगुना करे। पुनः उसे तिगुण करें जब मणियों को गूँथें तो ॐ (ओंकार) के साथ एक-एक अक्षर का पाठ करना चाहिए। उदाहरण के लिए—प्रथम मणि गूँथते समय ॐ 'अं' दूसरी मणि गूँथते समय ॐआं बोलना चाहिए। मणियों के बीच में गाँठ देना अपनी इच्छा पर निर्भर करता है। गाँठ देना या न देना- दोनों शास्त्र सम्मत हैं। किसी में दोष नहीं है। मणियाँ गूँथते समय अपने इष्ट मन्त्र का भी उच्चारण किया जा सकता है। अन्त में ब्रह्म ग्रन्थि अवश्य देनी चाहिए, उसके बाद सुमेरु को गूँथना चाहिए और फिर ग्रन्थि लगानी चाहिए।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

माला निर्माण में यह ध्यान रखना भी आवश्यक है कि माला एक

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

ही वस्तु की बनाई जानी चाहिए। उनके किसी अन्य वस्तु के मणि मिला दिया जाएँ।

माला संस्कार

यामल में लिखा है कि संस्कृत माला में ही जप फलदायक होता है और देवता प्रसन्न होते हैं। अ—संस्कृतमाला से जप का निष्फल होना व देवता का अप्रसन्न होना स्वाभाविक है विधि इस प्रकार है—

पीपल के नौ पत्ते लेकर उनसे अष्ठदल कमल का आकार बना लेना चाहिए जिसमें एक पत्ता बीच में होगा और आठ उसके आस पास होंगे। माला को बीच वाले पत्ते पर रखकर "ॐ ह्रीं अं आं इं उं ऊं ऋं ॠं एं ऐं ओं औं अं अ: कं खं गं घं ङं चं छं जं झं ञं टं ठं डं ढं णं तं थं दं धं नं पं फं बं भं मं यं रं लं वं शं षं सं हं लं क्षं" का उच्चारण करना चाहिए और कुशोदक से पञ्चगव्य से प्रक्षालन करना चाहिए और निम्न मन्त्र का उच्चारण करते हुए शुद्ध जल से उसे धो डालना चाहिये।

ॐ सद्योजातं प्रपद्यामि सद्योजाताय वै नमो नमः।
भवे भव नासि भवे भवस्व मां भवोद्भवाय नमः॥

इसके बाद निम्न मन्त्र का पाठ करते हुए चन्दन, अगर व गन्ध अग्नि से अर्पण करना चाहिए—

ॐ वाम देवाय नमो, ज्येष्ठाय नमः श्रेष्ठाय नमो,
रुद्राय नमः कलविकरणाय नमो, बलविकरणाय नमः।
बलाय नमो बलप्रसथनायनमः सर्वभूतदमनायः
नमो, मनोन्मनाय नमः।

निम्न अघोर मन्त्र से माला को धूमित करें—

ॐ अघोरेभ्योऽथघोरेभ्यो घोरघोर तरेभ्यः,
सर्वेभ्य सर्वशर्वेभ्यो नमस्ते रस्तु रुद्ररूपेभ्यः।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

फिर निम्न तत्पुरुष मन्त्र से चन्दन कस्तूरी आदि से लेपन करना चाहिए—

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

ॐ तत्पुरुषाय विद्धहे महादेवाय,
धीमहि तन्नो रुद्रः प्रचोदयात् ।

इसके बाद एक-एक दाने पर एक-एक बार अथवा सौ-सौ बार निम्न ईशान मन्त्र जप करें—

ॐ ईशानः सर्वा विद्यानमीश्वरः सर्वभूत्तानां
ब्रह्माधिपतिर्ब्रह्मणोऽधिपतिर्ब्रह्माशिवो मे शस्तुसदाशिवोम् ।

फिर माला के मेरु को क्रमशः ईशान व अघोर मन्त्र से दश-दश बार अभिमन्त्रित करें ।

इसके बाद माला का पंच-उपचारों से पूजन करना चाहिए । पंचोपचार पूजन इस प्रकार है—

गन्ध

परमानन्दसौरभ्यपरिपूर्णदिवान्तरम् ।
गृहाण परमं गन्ध कृपया परमेश्वर ॥

पुष्प

तुरीयं गुणसम्पन्वं नानागुणमनोहरम् ।
आनन्दसौरभं पुष्पं गृह्यतासिदमुत्तमम् ॥

धूप

वनस्पतिरसो दिव्यो गन्धाढ्यः सुमनोहरः ।
आघ्रेयः सर्वदेवानां धूपोऽयं प्रतिगृह्यताम् ॥

दीप

सुप्रकाशो महादीपः सर्वतस्तिमिरापहः ।
सबाह्याभ्यन्तर ज्योतिर्दीपोऽयं प्रतिगृह्यताम् ॥

नैवेद्य

सत्पात्रसिद्धः सुहविर्विविधानेक भक्षणम् ।
निवेदामि देवेश सानुगाय गृहणा तत् ॥

इसके पश्चात् माला की प्रार्थना करनी चाहिए ।
Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

ॐ महामाये महामाले सर्वशक्तिस्वरूपिणि ।

चतुर्वर्गस्त्वयिन्यस्तस्तस्मान्मे सिद्धिदा भव: ।
अविघ्नं कुरुमाले त्वां गृह्णामि दक्षिणे करे ।
जपकालेच सिद्धयर्थं प्रसीन मम सिद्धये ।

प्रार्थना करके माला को ग्रहण कर मन्त्र के देवता सविता का ध्यान करते हुए हृदय के निकट माला को धारण करते हुए मन्त्र के अर्थ का स्मरण करते हुए दिन के मध्य की अवधि पर्यन्त जप करना चाहिए। साढ़े तीन प्रहर की अवधि तक जाप करके अन्त में प्रणव, का उच्चारण करे–सुविधा की दृष्टि से १०८ बार जाप कर लें और १०८ आहुतियों का हवन कर लें, दूसरे मन्त्र का जप इस माला पर नहीं करना चाहिए माला को सुरक्षित स्थान पर सम्मान से रखना चाहिए और निम्न मन्त्र का उच्चारण करना चाहिए––

ॐ त्वां माले सर्वदेवानां सर्वसिद्धिप्रदा मता ।
तेन सत्येन मे सिद्धि देहि मातर्ननमोऽस्तु ते ।।

शास्त्र में माला को सुरक्षित रखने के लिए बहुत सावधान किया गया है जहाँ तक लिखा गया है कि माला हाथ से छूटकर गिरनी नहीं चाहिये। माला के टूटने को मृत्यु के समान माना गया है।

विधि

माला को अनामिका अँगुली पर रखकर अंगुष्ठ से छूते हुए मध्यमा अँगुली से फेरना चाहिये। सुमेरु का उल्लंघन नहीं करना चाहिए। पुन: जपते समय सुमेरु के निकट से माला को घुमाकर जप करना चाहिए। शान्ति और पुष्टि के लिए अंगुष्ट के अग्रभाग से माला का चालन करे। गौतमीय तन्त्र में विभिन्न कामनाओं की पूर्ति के लिये विभिन्न अँगुलियों के नियम लिखे हुये हैं। शत्रुनाश के लिए अँगूठे और कनिष्ठा से शत्रु के उच्चाटन के लिये तर्जनी और अँगूठे से, मन्त्र सिद्धि के लिये अँगूठे और मध्यमा से जप करना चाहिये। वैशम्पायन संहिता में मोक्ष सिद्धि के लिये किये जाने वाले जप के सम्बन्ध में निर्देश

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

दिया गया है कि अँगूठे और मध्यमा से अनामिका के मध्य पर्व पर माला फेरे। तर्जनी से माला न घुमाये। माला का सूत्र यदि पुराना पड़ जाये तो उसे पुनः गूँथ ले और १०० बार मूल मन्त्र का जप करें। जप करते समय यदि माला हाथ में गिर जाय तो उसे उठा कर १०८ बार जप करना चाहिये। किसी अशुद्ध वस्तु से माला छू जाए तो उसे पञ्चगव्य से धोए और जप करे। माला को गोमुखी में डालकर अथवा किसी शुद्ध वस्त्र से ढक कर जाप करना चाहिये माला पर किसी दूसरे व्यक्ति की दृष्टि नहीं पड़नी चाहिए। प्रातः काल में नाभि, मध्यान्ह में हृदय और संध्या काल नासिका के निकट हाथ रखकर जप करना श्रेष्ठ माना जाता है।

माला से जप करते हुए उपरोक्त तथ्यों का ध्यान रखा जाये तो मन्त्र साधना में अभीष्ट सिद्धि की प्राप्ति में सहायता मिलती है।

सामान्यतः गायत्री साधना में तुलसी या चन्दन की माला का प्रयोग किया जाना चाहिए। शंख, लाल चन्दन और रुद्राक्ष की माला का प्रयोग गायत्री की तान्त्रिक साधनाओं में होता है।

———

गायत्री जप का विधान

जप विधि–

साधना स्थल पर साकार उपासक गायत्री की मूर्ति या चित्र की स्थापना करें और धूप दीप, नैवेद्य, अक्षत, पुष्प आदि उपलब्ध पूजन सामग्री से पूजन करें। निराकार उपासक अग्नि को गायत्री का प्रतीक मानकर घृत, दीपक, धूप व अगरबत्ती की स्थापना कर लें। अब गायत्री देवी का आवाहन करें और निम्न का उच्चारण करें–

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

आयातु वरदा देवीं अक्षरं ब्रह्मवादिनी ।
गायत्री छन्सां माता ब्रह्मयोने नमोस्तुते ।।

इसके साथ ये भावना करनी चाहिये कि गायत्री माता अपने आसन पर निवास कर रही हैं । अब जप आरम्भ कर देना चाहिए । जप की गिनती माला द्वारा सुविधाजनक रहती है । यह अँगुलियों द्वारा भी की जा सकती है । जप इस प्रकार से करना चाहिए कि मन्त्र का उच्चारण होता रहे, होंठ हिलते रहें परन्तु पास बैठा व्यक्ति भी उसे सुन न सके। कम से कम से कम १ माला अर्थात् १०८ मन्त्रों का जप तो करना ही चाहिये । समय और रुचि हो तो ३, ५, ७, ९, ११ मालाओं का जप करना चाहिये । जप करते हुए साकार उपासक गायत्री माता के चित्र का ध्यान करें और यह कल्पना करें कि वह आकाश में सूर्य की तरह तेजोमय मण्डल में स्थित हैं । यह मूर्ति कल्पना नेत्रों से बार-बार ओझल हो जायेगी । गायत्री माता के अङ्ग प्रत्यङ्ग को श्रद्धापूर्वक निहार कर पुनः पुनः ध्यान करना चाहिये । बार-बार के अभ्यास से एक समय आयेगा जब माता का चित्र स्पष्ट रूप से अन्तर नेत्रों से दिखाई देने लगेगा । निराकार उपासक 'ओंकार' का ध्यान कर सकते हैं । अग्नि को गायत्री का प्रतीक मान कर ज्योति का ध्यान भी किया जा सकता है ।

जप का लाभ तभी होता है जब वह एकाग्रता पूर्वक किया जाये, वृत्तियाँ अन्तर्मुखी हों । यदि जप-साधन में माला घुमाने के साथ-साथ विचार अन्यत्र घूमते रहते हैं, तो शक्ति का विशेष विकास नहीं होपाता । एकाग्रता के लिये ध्यान किया जाता है, जो शक्ति को विशेष साधना है । ध्यान की सफलता में जप की सफलता निश्चित हैं । जप के साथ अर्थ चिन्तन को भी आवश्यक बताया गया है । इष्टदेव के गुण रूप का एक जीवन चित्र बन जाता है, जो कालांतर में संस्कार का रूप ग्रहण कर लेता है और पूर्व संस्कारों का शमन करता है । पूर्व संस्कारों में

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

जो काम क्रोध, मद, लोभ, द्वेष, ईर्षादि की भावनाएँ भरी पड़ी हैं, उनको धीरे-धीरे समाप्त करना जप-साधन की विशेषता है। विचारों में परिवर्तन होता है। मस्तिष्क कोष प्रभावित होते हैं, उन पर चिह्न बनते हैं, संस्कार जमते हैं और स्थायित्व आता है।

जप के नियम–

जप के इन नियमों का सावधानी पूर्वक पालन करना चाहिए—

शरीर की शुद्धि करके धुले और स्वच्छ वस्त्रों को पहिनकर साधना पर बैठना चाहिये। पालती मारकर सीधे ढङ्ग से बैठना चाहिये। मध्याह्न को उत्तर की ओर शाम को पश्चिम की ओर मुख करके बैठना चाहिये। मल-मूत्र त्याग या किसी अनिवार्य कार्य के लिये बीच में उठना पड़े तो हाथ-पैर धोकर पुनः बैठना चाहिए। शिखा खोलकर, पगड़ी या कुर्त्ता पहन कर, पैर फैलाकर, नंगे होकर व्यग्र चित्त से, क्रोध में और जूता आदि पहनकर जप करना निषिद्ध है। साधक का आहार-विहार सात्विक होना चाहिए। तन्त्र-सार के अनुसार मन की शुद्धि, पवित्रता, संयम, शौच, वैराग्य, मन्त्रार्थ, अव्यग्रता यह जप-सिद्धि की प्रधान सम्पत्तियाँ हैं। कुलार्णव के अनुसार अपवित्रता, रागरोष, नग्न-शिरता, बहिरलाप, अनवधानता, अन्यमनस्कता, साधना में बाधक माने गये हैं। साधक को पराया अन्न नहीं खाना चाहिए। वह जिसका अन्न खाता है, उसी को फल मिलता है।

जप न धीरे-धीरे हो, और न ही अधिक तीव्र—स्वाभाविक गति से चलना चाहिये। सिद्धि के लिए मन, शिव, शक्ति और वायु का संयम आवश्यक है। यह न होने पर शास्त्रों के अनुसार कल्पपर्यन्त जप करने पर भी सिद्धि प्राप्त करना सम्भव नहीं है। साधना-स्थल को पूर्ण रूप से सात्विक रखना चाहिए। वहाँ पर तामसिक व राजसिक वृत्ति वाले व्यक्तियों को न आने देना चाहिए। महापुरुषों और देवताओं के चित्रों और प्रेरणाप्रद वाक्यों से वह स्थान सुसज्जित होना चाहिये।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

साधक को अपनी इन्द्रियों पर संयम रखना आवश्यक है। इसके शीघ्र लाभ होता है। उत्तम विधि को एक साधक ने इस तरह बताया है—

नाम ही जपै शून्य मन धरै पाँचों इन्द्रिय वश में करै।
ब्रह्म अग्नि मे होमे काया, ताकें विष्णु पखारै पाँया॥

जप के समय मन्त्र के अर्थ का चिन्तन करना चाहिए। मन्त्रार्थ में जिन गुण का वर्णन किया गया हो, वह गुण हममें ओत-प्रोत हो गये हैं, यह दृढ़ भावना करना चाहिए। मन्त्र जप से जो एकाग्रता और शक्ति उत्पन्न होती है, उन-उन गुणों में अपने अन्तःकरण में स्थापित करने से सहायता मिलती है और धीरे-धीरे साधक उस मन्त्र के साक्षात् रूप होता जाता है यही सिद्धि के लक्षण हैं। योग दर्शन १।२८ में इस तथ्य का समर्थन करते हुए लिखा गया है कि मन्त्र का जप और अर्थ विचारने से समाधि-लाभ होता है। पूर्ण मनोयोग के साथ साधना करने वाले साधक इस स्थिति तक पहुँच ही जाते हैं।

जप के लिये उपयुक्त स्थान का होना आवश्यक है। लिंग पुराण ८५।१०६ के अनुसार घर में किये जप का फल साधारण होता है। नदी तट पर किये जप का फल लाख गुना और भगवान के श्री विग्रह के सामने किये जपका फल अनन्त होता है। लिंगपुराण ८५।१०७-१०८ के अनुसार पवित्र आश्रमों देवालयों, पर्वत शिखर पर, देव हृदय पर, समुद्र तट पर यह लाभ करोड़ गुना हो जाता है। ध्रुवतारा, सूर्य के अभिमुख होकर और गो, अग्नि, दीपक और जल के सामने जप करने का फल श्रेष्ठ माना गया है। सुविधा के लिये घर का स्वच्छ और सात्विक स्थान लेना अभीष्ट है।

जप की माला की भी विशेष उपयोगिता है। तन्त्रसार के अनुसार अँगुलियों पर मन्त्र-जप साधारण, पुत्र-जीव की माला से दस गुना, शंख
Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal
से सौ गुना, मूँगे से हजार गुना, मणि और रत्नों की माला से दस

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

हजार गुना, स्फटिक की माला से भी दस हजार गुना, मोती की माला से लाख गुना, सोने की माला से करोड़ गुना, कुश ग्रन्थि की माला से अरब गुना और रुद्राक्ष से जप करने से अनन्त गुना लाभ होता है। गणेशजी का जप हाथी दांत की माला से श्रेष्ठ माना गया है। कालिका पुराण में मूँगे की माला को सर्व प्रकार की कामनाओं की पूर्ति करने वाली, पुत्र जीव की माला को पुत्रदाता और समस्त पापों का विनाश करने वाली बताया गया है। वैष्णव मन्त्रों में तुलसी की माला ही श्रेष्ठ मानी गई है। सात्विक उपासना के लिए इसी का प्रयोग करना चाहिए।

जप-साधना में आसन भी विशेष महत्व रखता है। हंस माहेश्वर तन्त्र में वस्त्र पल्लव, तृण, पाषाण, वंशकुश, कम्बल, कृष्णाजित, व्याघ्र-चर्म आदि के आसनों की चर्चा की गई है परन्तु सात्विक उपासना में कुश का आसन ही श्रेष्ठ माना गया है। यदि बिना आसन भूमि पर बैठकर जप किया जाय तो जप साधना में उपार्जित शक्ति के पृथ्वी पर प्रवेश करने की सम्भावना रहती है, इसलिए साधक को अभीष्ट लाभ की प्राप्ति नहीं होती। कुश के आसन पर बैठकर साधना करने से यह लाभ है कि वह शक्ति को पृथ्वी में प्रविष्ट करने से रोकने और उसे सुरक्षित रखने की सामर्थ्य रखता है। इसलिए प्रायः इसी का प्रयोग किया जाता है।

गायत्री की ब्रह्म सन्ध्या

गायत्री की दैनिक जप साधना सन्ध्या वन्दना के बाद की जाती है। सन्ध्या की विभिन्न प्रकार की विधियाँ लोक में व्यवहार में देखी जाती है। यजुर्वेदीय सामवेदीय-सन्ध्यायें प्रसिद्ध मानी जाती हैं। दक्षिणात्यों की सन्ध्यायें, उत्तर वालों से भिन्नता रखती है। आजकल सनातन धर्म मतावलम्बी जनताएँ जो संध्या व्यवहार में लाई जाती है, वह श्रुति और स्मृति दोनों के मिले-जुले मन्त्रों से बनाई गई है। आर्य समाज

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

की संध्या का इनसे अन्तर है। अपनी रुचि और मान्यता के अनुसार किसी भी विधि की संध्या को स्वीकार किया जा सकता है।

केवल गायत्री मन्त्र से भी सन्ध्या की जाती है जिसे "ब्रह्म सध्या" की संज्ञा दी गई है। यह विधि सरल व प्रभावशाली है।

शास्त्रों में त्रिकाल "सन्ध्या" करने का विधान मिलता है। प्रातः व सायंकाल दो समय भी कर ली जाए तो उत्तम है। इसकी भी सुविधा न हो तो प्रातः काल एक समय तो करनी ही चाहिए। ब्रह्म मुहूर्त में उठकर शौच स्नादि से निवृति होकर और धुले हुए पवित्र वस्त्र धारण करके साधना पर बैठना चाहिये। गायत्री का सविता से सम्बन्ध है। अतः जिधर सूर्य होगा, उधर ही मुख करके साधना करनी होगी। प्रातः पूर्व की ओर, सायं पश्चिम की ओर दोपहर को उत्तर की ओर मुख करना चाहिये। आसन कुश का श्रेष्ठ माना गया है क्योंकि इससे साधना द्वारा शक्ति का पृथ्वीकरण नहीं हो पाता। स्थान एकान्त व शान्त होना चाहिए। वहाँ का वातावरण स्वच्छ व पवित्र हो। शरीर पर कम से कम वस्त्र हों। शीत ऋतु में कम्बल या शाल ओढ़ लेनी चाहिये। गर्मियों में एक धोती पर्याप्त है। हाथ पोंछने के लिये कन्धे पर अंगोछा रख लेना चाहिये। सन्ध्या के स्थान को नित्य प्रति धो लिया जाए तो अच्छा है। धूप, अगरबत्ती जला देने चाहिये ताकि वातावरण सुगन्धित हो जाए। पंच पात्र में जल भरकर रख लें पालती मार कर, मेरु दण्ड को सीधा रखकर सन्ध्या के लिए बैठे। विधान इस प्रकार हैं—

१. आचमन–

आचमन उद्देश्य त्रिविध ह्रीं, श्री, क्लीं, शक्तियों को आकर्षित करके धारण करना है। इसका स्थूल रूप तो दायें हाथ की हथेली में थोड़ा जल लेकर तीन बार पान करने का है परन्तु यह केवल जल के पीने का विधान पर्याप्त नहीं है। इसका सूक्ष्म विधान ही महत्वपूर्ण है, जिसमें भावना शक्ति का उपयोग किया जाता है। प्रथम आचमन के लिये दायें

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

हाथ में जल लेकर गायत्री मन्त्र का उच्चारण करते हुए यह भावना करें कि इससे 'ह्रीं' प्रधान सतोगुणी शक्ति जल में आ गई है और मन्त्र पूर्ण होने पर उसे पीते हुए भावना करें कि सतोगुण से ओत-प्रोत इस जल को पीकर मेरे अन्दर सतोगुण की भी मात्रा में वृद्धि हो रही है। इसी प्रकार से दूसरे व तीसरे आचमन के साथ रजोगुण व तमोगुणी शक्तियों के जल में प्रविष्ट होने की भावना करें। त्रिविध शक्तियों का आवाहन इसलिये किया जाता है कि गृहस्थ में इन सभी प्रकार की शक्तियों की नितांत आवश्यकता रहती है। कन्धे पर रखे अँगोछे से हाथ मुँह पोंछ लेना चाहिये।

२. शिखा बन्धन–

शिखा को जल से भिगोकर उसमें ग्रन्थि लगा लेनी चाहिए। महिलायें भीगे हाथ से उसका स्पर्श कर लें। गाँठ लगाते हुए गायत्री मन्त्र का उच्चारण करते रहना चाहिए और यह भावना करनी चाहिए कि मस्तिष्क के विद्युत भण्डार में हर समय विचार संकल्प और शक्ति परमाणु जो बाहर निकलकर आकाश में उड़ते रहते हैं, उन पर ताला लगा दिया है। जो शक्ति साधना में उपार्जित होगी, यह सुरक्षित रहेगी उसका आकाशीकरण न हो पायेगा।

३. प्राणायाम–

इस क्रिया से विश्वव्यापी प्राणतत्व को अपने अन्दर खींचकर धारण किया जाता है। इसके ४ भाग हैं—(१) पूरक—इससे वायु भीतर खींची जाती है। (२) अन्तर कुम्भक–इसकी वायु को भीतर रोका जाता है। (३) रेचक इसमें रोकी हुई वायु को बाहर निकाला जाता है। (४) बाह्य कुम्भक इसमें वायु को बाहर निकाला जाता है। पूरक व रेचक का समय बराबर होता है अर्थात जितना समय वायु खींचने में लगाया जाता है, उतना ही वायु को बाहर निकालने में लगाना चाहिये

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

अन्तर कुम्भक और बाह्य कुम्भक का समय भी बराबर होना चाहिए अर्थात् वायु को भीतर व बाहर रोकने का समय भी समान हो। इसका निश्चय घड़ी से भी हो सकता है और गिनती से भी।

वायु को भीतर खींचते समय 'ॐ भूः भुवः स्वः' का मानसिक उच्चारण करना चाहिए और भावना करनी चाहिए कि वायु के साथ विश्व व्यापी चैतन्य प्राण शक्ति मेरे भीतर प्रविष्ट हो रही है। वायु को धीरे-धीरे खींचना चाहिये और यथा शक्ति भर लेना चाहिये।

अन्तर कुम्भक में "तत्सवितुर्वरेण्यं" का पाठ करते रहना चाहिए और यह भावना करनी चाहिए कि तेजस्वी प्राण शक्ति को भीतर खींचने से चारों ओर शक्ति का संचार हो रहा है और मैं शक्ति का पुञ्ज बनता जा रहा हूँ।

रेचक में 'भर्गो देवस्य धीमहि' का जप करते हुए यह भावना करनी चाहिए कि सतोगुणी शक्तियों के आचमन से मेरे पापों का विनाश हो रहा है और वायु के साथ बाहर निकालते जा रहे हैं।

बाह्य कुम्भक में धियो यो नः प्रचोदयात्' का मानसिक उच्चारण करते हुए यह भावना चाहिए कि आसुरी शक्तियों के विनाश से अब मेरा शरीर पवित्र हो गया उनके भीतर प्रविष्ट होने का मार्ग बन्द हो गया है।

इस पवित्र भावनाओं के साथ किया गया प्राणायाम अधिक लाभ-दायक होता है। जितनी भावना पुष्ट व दृढ़ होगी, उतना ही लाभ अधिक होगा। आधुनिक मनोविज्ञान ने भी इस तथ्य को स्वीकार किया है। यह एक प्राणायाम की विधि है। संध्या में ५ प्राणायाम करने का विधान है। इतने न हो सकें तो एक प्राणायाम तो अवश्य करना ही चाहिये।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0 In Public Domain. Digitization by eGangotri

४. अघमर्षण–

इसका अर्थ व उद्देश्य है पाप विनाश। गायत्री सतोगुणी शक्ति की प्रतीक है उसके आवाहन से पापों, दुष्प्रवृत्तियों, दुर्भावनाओं का विसर्जन निश्चय है, जैसे सूर्य रूपी प्रकाश के आगमन से अन्धकार अपने आप चला जाता है, ऐसे ही भावना अघमर्षण क्रिया में की जाती है।

यह क्रिया संध्या में शरीर, प्राण व मन के त्रिविध पापों के विनाश के लिए तीन बार की जाती है।

सर्व प्रथम दायें हाथमें जल लेकर 'ॐ भूः भुवः स्वः' का उच्चारण करना चाहिये। इस दाँये नासिका से छः अंगुल दूरी पर रखना चाहिये और बायें हाथ के अंगूठे से बायीं नासिका को बन्द कर देना चाहिये। अब 'तत्सवितुर्वरेण्य' का उच्चारण करते हुए सांस भीतर खींचनी चाहिए और भावना करनी चाहिए कि गायत्री की सतोगुणी शक्ति का साँस के साथ प्रवेश हो रहा है। अब बायीं नासिका से बायें हाथ की हथेली को बायीं नासिका के सामने ले जायें, "भर्गो देवस्य धीमहि" का पाठ करते हुये यह भावना करें कि गायत्री सतोगुणी शक्ति के आगमन के फल स्वरूप पापी, दुर्विचारों और दुर्भावनाओं का विनाश हो रहा है और आसुरी वृत्तियों के मृत शरीर जल में गिर रहे हैं। भरी हुई सांस पूरी निकल जाने पर "धियो योनः प्रचोदयात्" का पाठ करते हुये उस जल को एक ओर गिरा देना चाहिये क्योंकि उसमें आसुरों की लाशों के आने की भावना की गई है। यह अघमर्षण की एक क्रिया है। इसे ३ बार करना चाहिये।

५. न्यास–

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

न्यास का अर्थ है—धारना करना। गायत्री धर्म के अनुसार शरीर रूपी ब्रह्माण्ड में सात लोक होते हैं। उन लोकों के प्रतीत हैं—मूर्धा

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

(मन, मस्तिष्क) २. आंखें, ३. कान, ४. वाणी और रसना, ५. हृदय, अन्तःकरण ६. नाभि, जननेन्दिय ७. हाथ, पैर। यह सात शक्ति केन्द्र हैं। इनको पवित्र रखना आवश्यक है तभी नियमित गायत्री जप साधना द्वारा शक्ति का विकास सम्भव है। न्यास द्वारा इन सात केन्द्रों को पवित्र व शक्तिशाली बनाया जाता है। विधि इस प्रकार है—

दायें हाथ के अँगूठे और अनामिका अंगुली को मिलाकर नीचे लिखे मन्त्र भागों में जहाँ संकेत हों, उसे स्पर्श करें और यह भावना करें कि वह अङ्ग शक्तिशाली व पवित्र बन रहे हैं।

१. ॐ भूर्भुवः स्वः—मूर्धाय नमः।
२. तत्सवितुः—नेत्राभ्यां नमः।
३. वरेण्यं—कर्णाभ्यां नमः।
४. भर्गो—मुखाय नमः।
५. देवस्य—कण्ठाय नमः।
६. धीमहि—हृदयाय नमः।
७. धियो यो नः—नाभ्यै: नमः।
८. प्रचोदयात्—हस्तोपादाभ्यां नमः।

यह गायत्री उपासना की भूत शुद्धि या ब्रह्म सन्ध्या है।

सन्ध्या के अन्य मन्त्र

गायत्री की ब्रह्म सन्ध्या की पाँचों क्रियाएँ केवल गायत्री मन्त्र के पाठ के साथ ही की जाती हैं। इन पांचों क्रियाओं को सम्पन्न करने के प्रथक मन्त्र भी उपलब्ध हैं। इनमें सुविधानुसार कोई भी विधि अपनाई जा सकती है। मन्त्र इस प्रकार है—

(१) ॥ पवित्रीकरण मन्त्र ॥

ॐ अपवित्रः पवित्रो वा सर्वावस्थां गतोऽपि वा।
Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal
यः स्मरेत्पुण्डरीकाक्ष स बाह्याभ्यन्तर, शुचिः॥

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

(२) ॥ आचमन् मन्त्र ॥

ॐ अमृतोपस्तरणमसि स्वाहा ।१

ॐ अमृतापिधानमसि स्वाहा ।२

ॐ सत्य यशः श्रीर्मयि श्रीः श्रयतां स्वाहा ।३

(३) ॥ शिखा-बन्धन मन्त्र ॥

चिद्रू पिणि महामाये दिव्यतेजः समन्विते ।
तिष्ठ देवि शिखा मध्ये तेजोंवृद्धि कुरुष्व मे ॥

(४) ॥ प्राणायाम मन्त्र ॥

ॐ भूः ॐ भुवः ॐ स्वः ॐ महः ॐ जनः ॐ तपः ॐ सत्यम् ।

ॐ भूर्भुवः स्वः तत्सवितुर्वरेण्यभर्गोदेवस्य धीमहि धियो योनः प्रचोदयात् । ॐ आपोज्योतीरसोऽमृतं ब्रह्म भूर्भुव स्वः ॐ ॥

न्यास मन्त्र—

ॐ वाङ् मे आस्येऽस्तु । मुख को ।

ॐ नसोर्मेप्राणौऽस्तु । नासिका के दोनों छिद्रों को ।

ॐ अक्षणोर्मे चक्षुरस्तु । दोनों नेत्रों को ।

ॐ कर्णयोर्मे श्रोक्षमस्तु । दोनों कानों को ।

ॐ वाह्वोर्मे बलमस्तु । दोनो भुजाओं को ।

ॐ ऊर्वोर्मेऽओजोऽस्तु । दोनों जंघाओं को ।

ॐ आरिष्टानिमेऽङ्गानि मनुस्तन्वा मे सह सन्तु ।

इससे समस्त शरीर पर जल छिड़कना चाहिए ।

दैनिक पूजा विधि

गायत्री की ब्रह्म सन्ध्या के बाद गायत्री पूजन का विधान है। पूजन के लिये एक चौकी पर पीला वस्त्र बिछाएँ और उस पर गायत्री माता का शीशे में मढ़ा हुआ सुन्दर चित्र स्थापित हो। जो साधक साकार उपासना को नहीं मानते, वे चित्र की स्थापना कर सकते हैं अथवा दीपक की अग्नि शिखा को ही गायत्री का प्रतीक मान सकते हैं।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

चौकी पर जल कलश, धूप दानी और दीपक रखा रहे। आरती व पूजन का सामान पहले से ही लाकर रख देना चाहिये ताकि बीच में न उठना पड़े।

सर्व प्रथम गायत्री माता का आह्वान करें। मन्त्र इस प्रकार हैं—

आयातु वरदा देवि, अक्षरं ब्रह्म वादिनी।
गायत्रीं छन्दसां माता ब्रह्मयोंने नमोस्तुते ॥

गायत्री मन्त्र के उच्चारण के साथ भी आह्वान किया जा सकता है। मन्त्र के उच्चारण के भावना करें कि भगवती हमारे आह्वान को स्वीकार करके कृपापूर्वक पधार गई हैं। जल, धूप बत्ती, चावल फूल नैवेद्य चन्दन और दीपक से भगवती का पूजन करें। पूजन के समय गायत्री मन्त्रों का उच्चारण करते रहें। चौकी पर एक तस्तरी रख लें। उसी में पूजन की वस्तुएं अर्पित करते रहें। पूजन के बाद हाथ जोड़ कर प्रणाम करें और भगवती को धन्यवाद दें कि उन्होंने हमारा पूजन स्वीकार किया। यह पूजन श्री सूक्त के १६ मन्त्रों से भी सम्पन्न किया जा सकता है। इन १६ वस्तुओं में जो उस समय उपलब्ध न हो, उसके स्थान पर जल या चावल का प्रयोग किया जा सकता है। मन्त्र इस प्रकार है—

श्री सूक्त

१—आवाहन

ॐ हिरण्यवर्णां हारिणीं सुवर्णरजतास्रजाम।
चन्द्रां हिरण्मयीं लक्ष्मीं जातवेदो म आवह ॥

२—आसन

ॐ तांम आवह जातवेदो लक्ष्मी मनपगामिनीम् ।
Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal
यस्या हिरण्य बिन्देय गामश्वं पुरुषानहम् ॥

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

३—पाद्य

ॐ अश्वपूर्वां रथमध्या हस्तिनादप्रबोधिनम् ।
श्रियं देवीमुपह्वये श्रीमाँ देवीर्जुषताम् ।(

४—अर्घ्य

ॐ कांन्सोस्मि तां हिरण्य प्रकारामार्द्रां ज्वलन्तीं तृप्तां तर्पयन्तीम् । पद्मे स्थितां पद्मवर्णां तामिहोपह्ह्वये श्रियम् ।

५—आचमन

ॐ चद्रां प्रभासां यशसा ज्वलन्तीं श्रियं लोके देवजूष्टामुद्राराम् । तां पद्मनाभिशरणमहं प्रपद्येऽअलक्ष्मीर्मे नश्यतां त्वां वृणावमि ॥

६—स्नान

ॐ आदित्यवर्णे तपसोऽधिजातो वनस्पतिस्तव वृक्षोऽयविल्वः । तस्य फलानि तपसा नुदन्तु मायान्तरायश्च वाह्याऽलक्ष्मीः ॥

७—वस्त्र

ॐ उपैतु मा देवसखः कीर्तिश्च मणिना सह ।
प्रादुर्भूतोसि राष्ट्रेऽस्मिन् कीर्तिवृद्धि ददातु मे ॥

८—यज्ञोपवीत

ॐ क्षुत्पिपासामलां ज्येष्ठामक्ष्मीं नाशयाम्यहम् ।
अभूतिमसमृद्धि च सर्वादिणुंद मे गृहात् ॥

९—गन्ध

ॐ गन्धद्वारां दुराधर्षां नित्यतुष्टां करीषिणीम् ।
ईश्वरीं सर्वभूतानां तामिहापह्वये श्रियम् ।

१०—पुष्प

ॐ मनसः काममाकूतिं वाचः सत्यमशीमहि ।
Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal
पशूनांरुहमन्नस्य मयि श्रीः श्रयतां यशः ॥

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

११—धूप

ॐ कर्दमेन प्रजा भूतामयि सम्भव कर्द्दम ।
श्रियं वासय मे कुले मातर पद्यमालिनीम् ।।

१२—दीप

ॐ आपः स्रजन्तु स्निग्धानि चिक्लीत वस मे ग्रहे ।
नि च देवीं मातरं श्रियं वासय मे कुले ।

१३—नैवेद्य

ॐ आर्द्रांपुष्करिणीं यष्टिं पिंगलां पद्ममालिनीम् ।
चन्द्रां हिरण्मयीं लक्ष्मीं जातवेदो म आवह ।।

१४—ताम्बूल पुंगीफल

ॐ आर्द्रां यःकरिणीं यष्टिं सुवर्णां हेममालिनीम् ।
सूर्यां हिरण्यमयीं लक्ष्मीं जातवेदो म आवह ।।

१५—दक्षिणा

ॐ तां म आवह जातवेदो लक्षमीमनपगामिनीम् ।
यस्या हिरण्यं प्रभूतं गावो दास्योऽश्वान्विन्देयं पुरुषाहनम् ।।

१६—पुष्पाञ्जलि

ॐ यः शुचिः प्रयतो भूत्वा जुहुयादाज्यमन्वहम् ।
सूक्तं पञ्चदशंच च श्रीकामः सततं जपेत् ।।

पूजन के बाद जप आरम्भ किया जाना चाहिए। जप से पहले माला का पूजन भी आवश्यक है। गायत्री मन्त्र का उच्चारण करें और माला को मस्तक पर लगा लें। दूसरे नी माला पूजन में न लें। जप विधि पहले लिखी जा चुकी है। उसी के अनुसार जप करें। जप करते हुए भगवती का ध्यान करें। ध्यान विधि भी अन्यत्र लिखी जा चुकी है।

गायत्री शाप विमोचनम्

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

गायत्री एक शक्ति है। इसका साधक निश्चय रूप से शक्ति का

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

विकास करता है। सात्विक, राजसिक व तामसिक तीन प्रकार की साधनाएँ व सिद्धियाँ होती है। साधक के उद्देश्य और भावना के अनुसार परिणाम उपस्थित होते हैं। इस शक्ति का उपयोग लोक कल्याण में भी हो सकता है और अनिष्ट ये भी। इसलिए विधि-विधान की ज्ञानकारी व पथ प्रदर्शन पात्र कुपात्र को देखकर किया जाता है ताकि कुपात्र के पास जाने से जन हानि की सम्भावना न हो।

पुराणों में भी ऐसी कथा आती है कि वशिष्ट और विश्वामित्र ऋषियों ने गायत्री की साधना निष्फल होने का शाप दे रखा है। देवताओं ने शाव विमोचन की प्रार्थना की तो उसने उत्कीलन की विधि व्यवस्था बनाई गई। विधि का भी अपना महत्व है परन्तु इस उपाख्यान की अपनी विशिष्ट महत्ता है।

वशिष्ठ एक सम्मानित पद होता था। जो साधक सवा करोड़ गायत्री का पूर्ण नियमों का पालन करते हुए जप करता था, उसे यह पद मिलता था। रघु, अज, दिलीप दशरथ, राम, लव-कुश, इन छः पीढ़ियों के गुरु एक वशिष्ठ नहीं, अलग-अलग थे पर निश्चित उपासना व तपस्या करने पर उन्होंने यह प्राप्त किया था। वशिष्ठ के शाप मोचन का अर्थ यह है कि इस तरह के सिद्ध साधक से गायत्री की दीक्षा लेनी चाहिए जो मार्ग की सभी कठिनाईयों का उचित रीति से मन्त्र निर्देशन कर सके। सवा करोड़ गायत्री जाप तप की ऐसी सीमा है जिस तक यह क्षमता प्राप्त हो जाती है। अतः ऐसे पथ-प्रदर्शन के संरक्षण में साधना करना वशिष्ठ का शाप मोचन है।

वशिष्ठ के अतिरिक्त विश्वामित्र का भी गायत्री को शाप है। विश्वामित्र का अभिप्राय है—विश्व का, समाज और राष्ट्र का हितचिंतक, हितैषी। स्वार्थी व्यक्ति किसी प्रकार का भी अनिष्ट कर सकता है। गुरु का तपस्वी होना ही पर्याप्त नहीं है, उसमें उदारता महानता और कर्तव्य निष्ठा के गुण भी होने चाहिए। रावण वेदपाठी विद्वान और तपस्वी तो था परन्तु चरित्र की दृष्टि से उसका स्वर बहुत नीचा था।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

वह वशिष्ठ तो कहा जा सकता है परन्तु विश्वामित्र नहीं । चाहे कितने भी तप क्यों न किये हो, यदि वह संकीर्ण मनोवृत्ति का है तो उसे गायत्री का साधना गुरु होने का अधिकार प्राप्त नहीं हो सकता। वशिष्ठ व विश्वामित्र का शाप मोचन तभी होगा जब तप और पवित्र दोनों से वह उच्च व श्रेष्ठ होगा । इन दोनों शापों से मुक्त होने पर गायत्री साधना निश्चित रूप से सफल होगी ।

वाशिष्ठ शाप विमोचन

ॐ अस्य श्रीं वसिष्ठशापमोचनमन्त्रस्यनिग्रहानुग्रहाकर्त्ता वसिष्ठ ऋषिः वसिष्ठानुगृहीता गायत्रीशक्तिर्देवता गायत्री छन्द वशिष्ठशापमोचनार्थं जपे विनियोगः ।। मन्त्र ।। ॐ सोंऽहकमर्कमय ज्योतिरहंशिवः आत्मज्योतिरहं शुक्रः सर्वंज्योतिरसोऽस्म्महम् । इत्युक्त्वा योनिमुद्रा प्रदश्य गायत्रीत्रयं पठित्वा ।।

(योनि मुनि मुद्रा दिखाकर तीन बार गायत्री जपना चाहिए ।)

ॐ देवीगायत्री त्वं वसिष्ठशापाद्विमुक्ता भव ।।

विश्वामित्र शाप विमोचनम्

ॐ अस्य श्रीविश्वामित्रशापविमोचनमन्त्रस्य नूतनसृष्टिकर्त्ता विश्वामित्रऋषिः विश्वामित्रानुगृहीता गायत्री शक्तिर्देवतावाग्देहा गायत्री छन्दः विश्वामित्रशापविमोचनार्थं जपे विनियोग।मंत्र। ॐ गायत्री भजाम्यग्निमुखीं विश्वगर्भां यदुद्भवा देवाश्चक्रिरेविश्वसृष्टिता कल्याणीमिष्टकरीं प्रगद्ये।यन्मुखान्निःसृतोऽखिलवेदगर्भ शापयुक्तातु गायत्री सफला न कदाचन। शापादुत्तारिता सातु भुक्तिमुक्तिफलप्रदा ।। प्रार्थना ।। अहो देवि महादेव सन्ध्ये विद्य सरस्वति । अजरे अमरे चैव ब्रह्मयोनिर्नमोऽस्तु ते ब्रह्मशापाद्वि-मुक्ताभव।।वसिष्ठशापाद्विमुक्ताभव।।विश्वामित्रशापाद्विमुक्त भव।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

प्रातःकाले ब्रह्म रूप-गायत्री ध्यानम्

ॐ वालां विद्यान्तु गायत्री लोहितां चतुराननाम् रक्ताम्बर-द्वयोपेतामक्षसूत्रकारां तथा । कमण्डलुधरां देवी हंसवाहन-संस्थिम् ब्राह्मणीं ब्रह्मदैवत्या ब्रह्मलोकनिवासिनीम् । मन्त्रेणा-वाहयेद्देवोमायान्तीं सूर्यमण्डलान् ॥

'ब्रह्मलोक में निवास करने वाली, कन्या की तरह हंसारूढ़, लाल वर्ण, चार मुख और चार हस्त वाली, दो लाल वस्त्र धारण करने वाली हाथों में कमण्डलु, पुस्तक, दण्ड और रुद्राक्ष की माला किए हुए आदित्य मण्डल से आने वाली गायत्री देवी का ध्यान करे ।"

मध्याह्न काले विष्णुरूप-गायत्री ध्यानम्

ॐ मध्यह्ने विष्णुरूपां च तार्क्ष्यस्थां पीतवाससम् ।
युवती च यजुर्वेदां सूर्यमण्डसंस्थिताम् ॥

'विष्णुरूपा (हाथों में शंक, चक्र, गदा और पद्म लिए) गरुड़ पर स्थिय, पीत वस्त्र धारण किये हुए युवती के रूप में, यजुर्वेद से युक्त सूर्यं मण्डल में स्थित गायत्री देवी का ध्यान करें ।'

सायंकाले शिवरूप-गायत्री ध्यानम्

ॐ सायाह्ने शिवरूपाञ्च वृद्धां वृषभवाहिनीम् ।
सूर्यमण्डलमध्यस्थां सामवेदसमायुताम् ॥

'शिव रूप (हाथों में त्रिशूल, डमरू, पाश और पात्र धारण किये हुए), वृषभ को वाहन बना कर, सूर्यमण्डल में स्थित और समावेद से युक्त गायत्री देवी का पूजन करे ।'

गायत्री हृदयम्

ॐ अस्य श्रीगायत्री हृदयस्य नारायण ऋषिर्गायत्रीच्छन्द
Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal
परमेश्वरी गायत्री देवता गायत्री हृदय जपे विनियोगः । अथार्थ-

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

न्यासः ।। द्यौमूर्ध्नि देवतम् । दन्तपंक्तायश्विनौ । उभे सन्ध्ये चौश्ठौ मुखमाग्निः । जिह्व सरस्वती । ग्रीवायां तु बृहस्पतिः । स्तनयोर्वसवोऽष्टौ । वाह्वोर्मरुतः । हृदये पर्जन्यः आकाशमुदरम् नाभावन्तरिक्षम् । कटयोरिन्द्राग्नी । जघने विज्ञानधनःप्रजापतिः। कैलाससमलये ऊरु । विश्वेदेवा जान्वोः जंघायां कोशिकाः गुह्य-मयने । ऊरु पितरः । पादौ पृथ्वी । वनस्पतयोऽङ्गलीषु । ऋषियो रोमाणि । नखानि मुहूर्तानि । अस्थिषु ग्रहाः । असृङ्म सं श्रृमवः संवत्सरा वै निमिषम् । अहोरात्रावादित्यश्चन्द्रमाः । प्रवरां दिव्यां गायत्री सहस्रनेत्रा शरणनहं प्रपद्ये । ॐ तत्सवितुवरेण्याय नमः । ॐ तत्पूर्वाजयाय तमः त्प्रातरादित्याय नमः । तत्प्रातरा-दित्यप्रतिष्ठायै नमः । प्रतारधीयनवो रात्रिकृतं पापं नाशयति । सायम धीयानो दिवसकृतं पापं नाशयति । सायं प्रातरधीयानो अपापो भवति सर्वतीर्थेषु स्नातो भवति । सर्वर्देर्ज्ञातो भवति । अवाच्यवनात्पूतो भवति । अचोष्यचोषणात्पूतो भवति अभोज्य-भोजनात्पूतो भवति अचौष्यचोषणात्पूतो भवति असाध्यसाधना-त्पू भवति । दुष्प्रतिग्रहशतहस्रात्पूतो भवति । सर्वं प्रतिग्रहात्पूतो भवति । पंक्तिदूषणात्पूतो भवति । अनृतवचनत्पूितो भवति । अधाऽब्रह्मचारी ब्रह्मचारी भवति । अनेन हृदयेनाधीतेन क्रतुसह-स्त्रेणेष्टं । भवति षष्टिशतसहस्र । गायत्र्या शप्यानि फलानि भवति । अष्टोंब्राह्मणाणु । सम्यग्ग्रहयेत् तस्यासिद्धि भवति य इदं नित्यमधीयानो ब्राह्मणः प्रातः शुचि सर्व पापैः प्रमुच्यय इति ।। ब्रह्मलोके महीषते इत्याह भगवान् श्रीनारायणः ।।

गायत्री कवचम्

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

ॐ अस्य श्री गायत्रीकवचस्य ब्रह्मा ऋषिगायत्रीच्छन्दो

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

गायत्री देवता ॐ भूः बीजम् भुवः शक्तिः स्वः कीलकम् गायत्री प्रीत्यर्थं जपे विनियोगः ॥

॥ अथ ध्यानम् ॥

पञ्चवक्त्रां दशभुजां सूर्यकोटिसमप्रभाम् ।
सावित्री ब्रह्मवरदां चन्द्रकोटिसुशीतलाम् ॥
त्रिनेत्रा सितवक्त्रां चमुक्ताहारविराजिताम् ।
वराभयाङ्कुशकशामहेपात्राक्षमालिकाः ॥
शंकचक्राब्जयुगलं कराभ्यां दधीति पराम् ।
सितपङ्कजसंस्था च हंसारूढां सुरविस्ताताम् ।
ध्यात्वैवं मानसाम्भोजे गायत्रीकवचं ॥

॥ ओ३म् ब्रह्मोवाच ॥

विश्वामित्र महायज्ञ गायत्री कवचं शृणु ।
यस्य विज्ञानमात्रेण त्रैलोक्यं वशयेत्क्षणात् ।१
सावित्री मे शिरः पातु शिखायाम मृतेश्वरी ।
ललाटं ब्रह्मदैवत्या भ्रुवौमे पातु वैष्णवी ।२
कर्णौं मे पाते रुद्राणी सूर्या सावित्रिकाऽम्बिके ।
गायत्री बदनं शारदा दशनच्छदौ ।३
द्विजान् यज्ञप्रिया पातु रसनायां सरस्वती ।
सांख्यायनी नासिकां में कपोलौ चन्द्रहासिनी ।४
चिबुकं वेदगर्भा च कण्ठं पात्वघनासिनी ।
स्तनो मे पातु इन्द्राणी हृदयं ब्रह्म वादिनी ।५
उदरं विश्व भोक्त्री च नाभौ पातु सुरप्रिया ।
जघन नारसिंही च पृष्टं ब्रह्माण्ड धारिणी ।६
पार्श्वौ मे पातु पद्माक्षी गुह्यं गोगोप्त्रिकाऽवतु ।
ऊर्वोरोंकाररूपा च जान्वोःसन्ध्यात्मिकाऽवतु ।७

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

जंघयोः पातु अक्षोभ्या गुल्फयोश्च ह्यशीर्यका ।
सूर्या पदद्वयं पात चन्द्रा पादांगुलीषु च ।८
सर्वाङ्ग वेदजननी पातु मे सर्बदाऽनघ ।
इत्येतत् कवचं ब्रह्मन गायश्याः सवंपावनम् ।
पुण्यं पवित्रं पापघ्नं सर्वरोगनिवारणम् ।
त्रसन्ध्यं यः पठेद्विद्वान् सर्वाम् कामनवाप्नुयात् ।
सर्वशास्त्रार्थतत्वज्ञः सः भवेद्वेदवित्तम् ।१०
सर्वे यज्ञफलं प्राप्यं ब्रह्मान्ते समवाप्नुयत् ।
प्राप्नोति जपमात्रेण पुरुषार्थाच्चतुविधान् ।११

गायत्री तर्पणम्

इसे केवल प्रातःकाल की सन्ध्या में ही करना चाहिए ।

ॐ गायत्र्या विश्वामित्र ऋषिः सवित देवता गायत्री छन्द गायत्री तर्पणें विनियोगः ।। ॐ भूः ऋग्वेद पुरुषं त० । ॐ स्वः सामवेद पुरुषं त० महः अथर्ववेद पुरुपं त० । ॐ जनः इतिहास पुराण पुरुषं त० । ॐ तपः सर्वागय पुरुषं त० । ॐ सत्यं-सत्यलोक पुरुष तं० । ॐ भूः भूर्लोक पुरुषं त० । ॐ भुवः भुवर्लोक पुरुषं त० । ॐ स्वः स्वर्लोक पुरुष त० । ॐ भूः एकयदां गायत्री त० । ॐ भुबः द्विपदां गायत्री त० । ॐ स्वः त्रिपदां गायत्रीं ॐ भूर्भुवः स्वः चतुष्पर्द गायत्रीं त० । ॐ उषसीं त० । ॐ गायत्रीं तः । ॐ सावित्रीं तः । ॐ सरस्वती त० । ॐ वेदमातरं त० । ॐ पृथिवीं त० । ॐ अजां त० । ॐ कौशिकीं त० । ॐ सांकृति त० । ॐ सर्वजितां त० । तत्सद् ब्रह्मार्पणमस्तु ।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

क्षमा प्रार्थना

साधन में हुई त्रुटियों के लिये निम्न प्रकार से क्षमा प्रार्थना करनी चाहिये—

आवाहन न जानामि न जानामि पूजनम् ।
पूजा चैव न जानामि क्षमस्व परमेश्वरः ।१
मन्त्रहीनं क्रियाहीनं भक्तिहीनं सुरेश्वरः ।
यत्पूजितं मया देवं परिपूर्णं तदस्तु मे ।
यदक्षरपदभ्रष्टं मात्राहीनं च यद् भवेत् ।
तत्सर्वं क्षम्यतां देव प्रसीद परमेश्वरः ।३
यस्य स्मृत्या च नामोक्त्या तपोयज्ञक्रियादिषु ।
न्यूनं सम्पूर्णतां याति सद्यो वन्दे तमच्युतम् ।४
प्रमादात्कुर्वतां कर्म प्रच्यवेताध्वरेषुयत् ।
स्मरणादेव तद्विष्णोः सम्पूर्णं स्यादिति श्रुति ।५

स्तोत्र पाठ

इसके बाद गायत्री के एक या अनेक रुचिकर स्तोत्रों का पाठ किया जा सकता है । स्तोत्र इस प्रशार है ।

(१)

यन्मण्डलं दीप्तिकरं विशाडलं, रत्नप्रभम् तीव्रमनादिरूपम् ।
दारिद्र् दुःख क्षय कारणं च पुनातु मां तत्सलितुर्वरेण्यम् ।१
यन्मण्डलंदेबगणैः सुपूजितम्, विप्रैस्तुत मानवमुक्ति कोविदम् ।
त देव देवं प्रणमाभि भर्ग पुनातु मां तत्स वितुर्वरेण्यम् ।२
यन्मण्डलं ज्ञान घनत्व गम्यं, त्रैलोक्य पूज्यं त्रिगुणात्मरूपं ।
समस्त तेजो मय दिव्य रूपं, पुनातु मां तत्सवितुर्वरेण्यम् ।३
यन्मण्डलं गूढमति प्रबोधम, धर्मस्य वृद्धि कुरुते जनानाम् ।
Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal
तत्सर्व पाप क्षय कारणं च, पुनातु मां तत्सबितुर्वरेण्यम् ।

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

जिसका मण्डल अर्थात् वर्तुलाकार तेजोवृत्त दीप्ति अर्थात् कान्ति के करने वाला है, परम विशाल है, रत्नों की देदीप्यमान प्रभा के सदृश प्रभा वाला है, अत्यन्त तीव्र तथा अनादि स्वरूप वाला है और दरिद्रता से होने वाले दुःख एवं भय कारण है, वह 'तत्सवितुर्वरेण्य' मुझे पवित्र कर देवे। वह सविता का परम श्रेष्ठ तेज है।१। जिस मण्डल की देव गणों के द्वारा भली-भाँति पूजा की गयी है, जिसका विप्रों के द्वारा स्तवन किया गया है तथा जो मानवों की मुक्ति अर्थात् बारम्बार संसार में जन्ममरण के आवागमन से छुटकारा दिलाने में परम पंडित अर्थात् समर्थ है, उन देवों की भी देव भर्ग को मैं प्रणाम करता हूँ, मेरी 'तत्स-वितुर्वरेण्यं' पवित्र करें। तात्पर्य यही है कि सविता का श्रेष्ठ तेज मुझे सब पापों से विमुक्त कर पवित्र बना देवे।२। जिसका मण्डल अथवा जो गायत्री का वर्त्तुल आकार वाला तेजो वृत्त घनी भूत ज्ञान के द्वारा जानने के योग्य है, जो तीनों लोकों के द्वारा पूज्य है और निर्गुणात्म रूप वाला है, सम्पूर्ण रूप से परिपूर्ण दिव्य अर्थात् अच्युत्तम रूप से युक्त है वह 'तत्सवितुर्वरेण्य' मुझे पवित्र कर देवे।३। जिसका मण्डल प्रकष्ट ज्ञान को गूढ़ कर देता है, जो मानवी के हृदय में धर्म की बुद्धि समुत्पन्न करता है और वह समस्त प्रकार के घोरातिघोर पापों के क्षय (विनाश) करने वाला कारण हैं वह सविता का वरेण्य तेज मुझे पवित्र करें।४।

यन्मण्डल व्याधि विनाशदक्षम्, यद्रग् यजुः सामसु सम्प्रगीतम्।
प्रकाशितं ये न च भूर्भुवः स्वः पुनानु मां तत्सवितुर्वरेण्यम्।५
यन्मण्डलं वेदविदो वदन्ति, गायन्ति यच्चारण सिद्ध संघाः।
यज्ञोगिनों योगजुषां च संघा पुनातु मां तत्सवितुर्वरेण्यम्।६
यामंडलं सर्व जनेषु पूजितम् ज्योतिश्च कुर्यादि मर्त्यलोके।
यत्काल कालादिमनादि रूपम् पुनातु मां तत्सवितुरेण्यम्।७
Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal
यन्मण्डलं चतुर्मुखास्यम् यदक्षरं पाप हरं जनानाम्।

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

यत्काल कल्पक्षय कारणं च पुनातु मां तत्सवितुर्वरेण्यम् ।८

जो मण्डल व्याधियों के विशेष रूप नाश कर देने के कार्य में दक्ष अर्थात् परम प्रवीर्ण एवं समर्थ है जिसका वेदत्रयी (ऋग्वेद यजुर्वेद-साम-(वेद) में भली-भाँति गान किया है अर्थात् इनको प्रकाश में लाकर रखा है, 'तत्सवितुर्वरेण्य' मुझे पवित्र कर।५। जिस मंडल को वेदों के तत्वार्थ के विज्ञाता मनीषीगण जानते हैं जिस मंडल के स्तवन का चारण और सिद्धों के समुदाय गायन किया करते हैं जिसका ज्ञान पूर्वक गान योगी-गण और योग के सेवन करने वाले समूह किया करते हैं वह सविता का वरेण्य तेज मुझको पवित्र करे।६। जो मण्डल सभी जनों के द्वारा पूजित है, जो इस मर्त्यलोक में ज्योति कर देता है, जो काल से भी अनादि है, जिनका रूप भी ऐसा है जिसका आदि काल ही हीन है वह सविता का वरेण्य तेज मुझे शुद्ध एवं पवित्र करे।७। जो मण्डल भगवान विष्णु और चतुर्मुख ब्रह्मा का आस्य अर्थात् मुख है, जो नाश रहित, जो धन समुदाय के पापों का हरण करने वाला है, जो काल और कल्पों के क्षय करने का कारण स्वरूप है, वह 'तत्सवितर्वरेण्य मुझे पवित्र करे।८।

यन्मंडल विश्वसृजां प्रसिद्धम् उत्पत्तिरक्षा प्रलय प्रगल्भम् ।
यस्मिन् जगत् संहरतेऽखिलं च पुनातु मां तत्सवितुर्वरेण्यम् ।९
यन्मंडलं सर्व गतस्य विष्णोः आत्मा परं धाम विशुद्ध तत्वम्
सूक्ष्मा तरैर्योगपथानुगम्यम पुनातु मां तत्सवितुर्वरेण्यम् ।१०
यन्मन्डलं ब्रह्म विदो वदति गायन्ति यच्चारण सिद्धसघा ।
यन्मन्डलं वेदविदः स्मरन्ति पुनातु मां तत्सवितुर्वरेण्यम् ।।११
यन्मन्डलं वेद विदोपगीतम् यद्योगिनां योग पथानुगम्यम् ।
तत्सर्ववेदं प्रणमामि दिव्यं पुनातु मां तत्सवितुर्वरेण्यम् ।१२

जो मण्डल विश्व के सृजन करने वालों में प्रसिद्ध है और विश्व
Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal
की उत्पत्ति, संक्षण और प्रलय करने में समर्थ है तथा जिसमें यह

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

समस्त जगत् संहार को प्राप्त होता है, वह सविता देव का वरेण्य तेज मुझे पवित्र करे।९। जो वर्त्तुलाकार तेजोवृत्त सबमें व्याप्त भगवान विष्णु का आत्मा है, परधाम है और विशुद्ध तत्व है, परम सूक्ष्म स्वरूप एवं योग के मार्ग द्वारा अनुगम्य अर्थात् गमन करने के योग्य है वह तत्सवितुर्वरेण्य, मुझको पुनीत करे।१०। जिस मण्डल को वेदों के ज्ञाता विद्वान् जानते हैं और चारर्ण तथा सिद्ध गण जिसका गायन किया करते हैं, जिस मण्डल का स्मरण वेदों के तत्वार्थ ज्ञात किया करते हैं, वह सविता का परम श्रेष्ठ तेज मुझे पवित्र करे।११। जो मण्डलवेद वेत्ताओं के द्वारा उपगीत हैं अर्थात् जिसका ज्ञान किया गया है और जो योगियों के योग मार्ग द्वारा अनुगमन करने के योग्य है उस समस्त वेदों के स्वरूप वाले एवं परम दिव्य को मैं प्रणाम करता हूँ, वह 'तत्सवितुर्वरेण्य' मुझे पवित्र करे।१।

(२)

'ॐ' ही रक्षक हमारे, सब गुणों की खान हो।
'भू' सदा सब प्राणियों के, प्राण के भी प्राण हो ।।
'भुव' सब दुःखों को करते दूर, कृपा निधान हो।
'स्व' सुखरूप सुखरूप सुखदा सुखद महान हो।
'तद्' वही सुप्रसिद्ध ब्राह्मण वेद वर्णित सार हो।
देव 'सवितुर सर्व उत्पादक हो, पालन हार हो ।।
शुभ 'वरेण्यम्' वरण योग्य भगवन आप हो।
शुद्ध 'भर्गो' मल रहित निर्लेप हो निष्पाप हो।
दिव्य गुण ,देवस्य' दिव्यस्वरूप देव अनूप के।
'धीमहि' धारे हृदय में, दिव्य गुण रूप के ।।
'धियो यो नः' वह हमारी बुद्धियों का हित करें।
अमर 'प्रचोदयात्' नित सन्मार्ग प्रेरित में करें ।।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

(३)

युग-युग पूजित गायत्री मां, ऐसी कृपा करो।
आज तुम ऐसी कृपा करो !!
जन-जन के प्रति विमल भावना,
सबके हित की रहे कामना,
यह जीवन ही बने साधना,
मेरे मन में कर्त्तव्य के प्रति अनुराग भरो !!
आज तुम ऐसी कृपा करो !
पूरब की लाली बन जाओ,
कलरव के स्वर में नित गाओ,
ज्योतित पावन पथ बनाओ,
अन्धकार में बनकर मंगल किरण देवि बिखरो !
आज तुम ऐसी कृपा करो !!
मातृ-भूमि से प्यार हमें दो,
निर्भय हृदय उदार हमें दो,
अपना मृदुल दुलार हमें दो,
लक्ष्य दीप बनकर के मेरे मानस में निखरो !
आज तुम ऐसी कृपा करो !!

आरती गायत्री जी की

जयति जय गायत्री माता, जयति जय गायत्री माता।
आदि शक्ति तुम अलख निरञ्जन जग पालन कर्त्री।
दुःख शोक भय क्लेश कलह दारिद्रय दैत्य हर्त्री।
ब्रह्म रूपिणी प्रणत पालिनी, जगतधातृ अम्बे।।
भवभयहरी, जन हितकारी सुखदा जगदम्बे।
भय हारिणी भव तारिणि अनघे अज आनन्द राशी।
Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal
अविकारी अघहरी, अविचलित अमले, अविनाशी।।

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

कामधेनु सत् चित आनन्द जय गङ्गा गीता ।
सविता की शाश्वती शक्ति तुम सावित्री सीता ।।
ऋग्, यजु, साम, अथर्व प्रणयिनी, प्रवण महामहिमे ।
कुण्डलिनी, सहस्रार, सुषुम्ना शोभा गुण गरिये ।।
स्वाहा, स्वधा शची ब्राह्मणी राधा रुद्राणी ।
जय सतरूपा वाणी विद्या कमला कल्याणीं ।।
जननी हम है दीन हीन दुःख दारिद के घेरे ।
यदपि कुटिल कपटी कपूत तऊ बालक है तेरे ।।
स्नेह सनी करुणामय माता चरण शरण दीजै ।
बिलख रहे हम शिशु सुन तेरे दया दृष्टि कीजै ।।
काम, क्रोध, मद, लोभ, दम्भ, दुर्भाव, द्वेष हरिये ।
शुद्धबुद्धि, निष्पाप हृदय मन को पवित्र करिये ।।
तम समर्थ सब भाँति तारिणी, तुष्ट, पुष्ठ त्राता ।
सत मारग पर हमें चलाओ जो हैं सुख दाता ।।
जयति जय गायत्री माता जयति जय गायत्री माता ।

श्री गायत्री चालीसा

यदि इन स्त्रोतों का पाठ सम्भव न हो तो गायत्री चालीसा का पाठ भी किया जा सकता है । उपरोक्त स्तोत्रों के पाठ के बाद भी सुविधा होने पर इसका पाठ किया जा सकता है । चालीसा पाठ इस प्रकार है—

दोहा—ह्रीं, श्रीं क्लीं मेधा प्रभा, जीवन ज्योति प्रचण्ड ।
शान्ति, कान्ति, जागृति, प्रगति, रचना शक्ति अखण्ड ।।
जगत लननि मङ्गल करनी, गायत्री सुखधाम ।
प्रणवों सावित्री स्वधा, स्वाहा पूरन काम ।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

भूर्भुव स्वः ॐ युत् जननी । गायत्री नित कलिमय दहनी ।

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

अक्षर चौबीस परम पुनीता । इनमें बसें शास्त्र श्रुति गीता ॥
शाश्वत सतोगुणी शतरूपा । सत्य सनातन सुधा अनूपा ॥
हंसारूढ़ सितम्बर धारी । स्वर्ण कान्ति शुचि गगन विहारी ॥
पुस्तक पुष्प कमण्डलु माला । शुभ्र वर्ण तनु नयन विशाला ॥
ध्यान धरत पुलकित हित होई । सुख उपजत दुःख दुरमति खोई ॥
कामधेनु तुम सुरतर छाया । निराकार की अद्भुत माया ॥
तुम्हरी शरण गहै जो कोई । तरै सकल संकट सों सोई ॥
सरस्वती लक्ष्मी तुम काली । दिपै तुम्हारी ज्योति निराली ॥
तुम्हरी महिमा पार न पावें । जो शारद शतमुख गुन गावें ॥
चार वेद की मात पुनीता । तुम ब्राह्मणी गौरी सीता ॥
महामन्त्र जितने जग माहीं । कोऊ गायत्री सम नाहीं ॥
सुमिरत हिय में ज्ञान प्रकासै । आलस पाप अविद्या नासै ॥
सृष्टि गोज जग जननी भवानि । कालरात्रि वरदा कल्याणि ॥
ब्रह्मा, विष्णु रुद्र सुर तेजे । तुम सों पावें सुरता तेते ॥
तुम भक्तन की भक्त तुम्हारे । जननिहिं पुत्र प्राण ते प्यारे ॥
महिमा अपरम्परा तुम्हारी । जै जै जै त्रिपदा भयहारी ॥
पूरित सकल ज्ञान विज्ञाना । तुमसम अधिक न जग में आना ॥
तुमहिं जानि कछु रहे न शेषा । तुमहिं पाय ककु रहे न क्लेशा ॥
जानत तुमहिं तुमहिं ह्वै जाई । पारस परसि कुधातु सुहाई ॥
तुम्हरी शक्ति दिपै सब ठांई । माता तुम सब ठौर समाई ॥
ग्रह नक्षत्र, ब्रह्माण्ड गनेरे । सब गतिवान तुम्हारे प्रेरे ॥
सकल सृष्टि की प्राण विधाता । पालक पोषक नाशक त्राता ॥
मातेश्वरो दया वृत धारीं । तुम सम तरे पातकी भारी ॥
जा पर कृपा तुम्हारी होई । तापर कृपा करें सब कोई ॥
मन्द बुद्धि ते बुद्धि बल पावें । रोगी रोग रहित ह्वै जावें ॥
Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal
दारिद मिटैं कटैं सब पीरा । नासै दुःख हरै भव भीरा ॥

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

गृह क्लेश चित्त चिन्ता भारी । नासै गायत्री भयहारी ॥
सन्तति हीन सुसन्तति पावें । सुख सम्पति युत मोद मनावें ॥
भूत पिचाश सबै भय खावें । यम के दूत निकट नहीं आवें ॥
जो सवधा सुमिरै चित्त लाई । अछत सुहाग सदा सुखदाई ॥
घर वर सुखप्रद लहैं कुमारी । विधवा रहें सत्य व्रत धारी ॥
जयति-जयति जगदम्ब भवानी । तुम सम और दयालु न दानी ॥
जो सदागुरु सौं दीक्षा पावें । सो साधन कों सफल बनावें ॥
सुमिरन करै सुरुचि बड़भागी । लहैं मनोरथ गृही विरागी ॥
अष्ट सिद्ध नव निधि को दाता । सब समर्थ गायत्री माता ॥
ऋषि मुनि,जती,तपस्वी योगी । आरत अर्थी, चिन्तित, भोगी ॥
जो जो शरण तुम्हारी आवें । सो सो निज वांछित फल पावें ॥
बल बुद्धि विद्या शील सुभाऊ । धन वैभव यश तेज उछाहू ॥
सकल बढ़ै उपजै सुख नाता । जो यह पाठ करै धर ध्याना ॥

दोहा—यह चालीसा भक्ति युत् पाठ करे जो कोय ।
तापर कृपा प्रसन्नता, गायत्री की होय ॥

विसर्जन

अन्त में विसर्जन मन्त्र का उच्चारण करना चाहिए जो इस प्रकार है—

उत्तमे शिखरे देवि भूम्या पर्वत मूर्धनि ।
ब्राह्मणेभ्यो ह्यनुज्ञात गच्छ देवि यथासुखम् ॥

अर्घ्यदान

जल पात्र में रखे जल से सूर्य भगवान का अर्घ्य देना चाहिए। मन्त्र इस प्रकार है—

ॐ सूर्य देव सहस्रांशो तेजो राशि जगत्पते ।
Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal
अनुकम्पाय मां भक्त्या ग्रहणार्घ्यं दिवाकर ॥

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

यह दैनिक साधना का कम है। प्रातःकाल का समय तो श्रेष्ठ माना गया है। सुविधा होने पर सायंकाल की भी साधना करनी चाहिए। सायंकाम सूर्यास्त होने के एक घण्टे बाद तक गायत्री जप किया जा सकता है। प्रातः सूर्योदय होने के दो घण्टे पूर्व से आरम्भ किया जा सकता है।

गायत्री साधना की उत्कृष्ट ध्यान विधियां

सिद्धि का साधन

संसार के सभी महत्वपूर्ण कार्यों की सफलता के लिए मनोयोग अथवा ध्यान की एकाग्रता की आवश्यकता होती है। इसमें भी आध्यात्मिक ज्ञान तो बिना ध्यान के निश्चल हुए हो ही नहीं सकता। ध्यान पूर्वक विचार करने से ही हम किसी वस्तु के मल स्वरूप और उसकी वास्तविकता को जान सकते हैं। यदि हमारा ध्यान इधर-उधर बँटा रहता है, तो हम किसी विषय की गहराई में बैठकर यथातथ्य ज्ञान प्राप्त नहीं कर सकते। जिस तरह से आतशी शीशे से सूर्य की बिखरी किरणों को एकत्रित करके किसी कपड़े या काजल पर फेंका जाता है तो वह जलने लगता है, पर बिना एकत्रित हुए साधारणतः वह उसे जलाने की सामर्थ्य नहीं रहती, इसी तरह किसी समस्या पर गम्भीरतापूर्वक विचार करने पर, एकाग्रतापूर्वक मनन करने पर उलझी हुई गुत्थियों का भी सरल समाधान प्राप्त हो जाता है। कारण स्पष्ट है कि मन की

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

बिखरी हुई शक्तियाँ एकत्रित हो जाती हैं। एकता शक्ति का दूसरा

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

नाम है। मन की अपार सामर्थ्य को एक निश्चित मार्ग में लगा देने से शक्ति के द्वार खुल जाते हैं। इसी को सिद्धि कहा जाता है। इसलिए ध्यान योग का साधक सिद्धि के मार्ग की ओर पग बढ़ाता है, उसे हरक्षेत्र में सिद्धि ही सिद्धि दिखाई देती है। असफलता या असम्भव का एक कण भी उसे सारी सृष्टि में दृष्टिगोचर नहीं होता। वह सफलता के झण्डे गाढ़ता हुआ निरन्तर आगे बढ़ता ही रहता है।

पाश्चात्य विचारक श्री आर्टी में ब्लैकर्ब ने लिखा है कि 'मन की वृत्तियों के विच्छृङ्खल होने से ही सब प्रकार की हानि होती है। मन की वृत्तियों को एक स्थान पर एकत्रित करने से समस्त प्रकार के लाभ प्राप्त होते हैं। इस विधि व्यवस्था से व्यक्ति युद्धों में विजय प्राप्त करता है, शक्ति का विकास करता है आर्थिक रूप में प्रगति करता है और अपनी भौतिक इच्छाओं को मूर्त रूप देने में सफल होता है। जो लोग अपनी आत्मा के विकास के इच्छुक है वह इस उपाय से सुविधा-पूर्वक ईश्वर से एकता स्थापित करते हैं।"

परिभाषा–

योग दर्शन (३।२) के अनुसार 'जहाँ चित्त को ठहराया जाये, उसी में वृत्ति का एक-सा बना रहना ध्यान है।" धारणा के बाद ध्यान होता है अर्थात् धारणा से जिस देश विशेष में चित्त लगाया जाता है, उसी ध्येय में जिसका ध्यान लगा रहे, चित् वृत्ति समान प्रवाह से निरन्तर लगी, रहे दूसरी कोई वृत्ति बीच में न आवे, वही ध्यान हैं। अर्थात् चित्त की वृत्तियाँ ध्येय में ऐसी तन्मय हो जाएँ कि जैसे भौंरा कमल पुष्प में तन्मय होकर वेसुध हो जाता है और सूर्यास्त में कमल का मुख बन्द होने पर स्वयं बन्द हो जाता हैं।

धारणा की परिपक्व अवस्था को ही ध्यान कहते हैं। जहाँ धारणा स्थिर की जाती है, तैल धारा की तरह उसी स्थान पर एक गति से प्रवाह का चलना ही ध्यान कहलाता है। सांख्यकार (६।२५)

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

न मन को निर्विषय करना ही ध्यान बतलाया है जिसमें मन बाह्य विषयों की ओर आकर्षित न हो और उस आकर्षण में वह उनका चिन्तन न करें। ध्यान का उद्देश्य मन को आज्ञा चक्र, ब्रह्मरन्ध्र या हृदय में जमाना होता है ताकि उसकी उछलकूद धीरे-धीरे संयमित होती जाये और-वासनाओं पर मंडराने की उसकी स्वाभाविक वृत्ति पर नियन्त्रण रहे। जब मन भौतिक विषयों से हटकर अन्त: प्रदेश में प्रवेश करने लगता है तो समझना चाहिए कि ध्यान का उद्देश्य पूर्ण हो रहा है।

आत्मदर्शन की अनुभूति–

जब वाह्य वृत्तियाँ एकाग्र करके ध्यान द्वारा स्थिर करली जाती है तो साधक आत्म दर्शन और ब्रह्मतत्व की अनुभूति की ओर बढ़ता है। शास्त्र में इसकी पुष्टि करते हुए लिखा गया है कि ध्यान योगे न सम्पश्येदगति भस्मान्तरात्न" अर्थात् ध्यान योग के द्वारा ही अन्त—रातमा का स्पष्ट रूप से साक्षात्कार होता है। इसके कारण पर प्रकाश डालते हुए भगवान मनु ने (६।७२) लिखा है कि "ध्यान से मोहादि गुण जल जाते हैं। ध्यानविन्दूपनिषत् (१) के ऋषि ने भी सशक्त शब्दों में कहा है, यदि पर्वत के समान अनेक योजन विस्तार वाले पाप भी हों तो वे ध्यान योग से नष्ट हो जाते हैं। इसके अतिरिक्त और किसी तरह उनका नाश नहीं होता। पापों को जला कर भस्म करने का उत्तम साधन ध्यान है, पापों से ही मनुष्य दुर्बल होता है। ध्यान द्वारा जितने-जितने पाप दग्ध होते हैं, उतना ही साधक शक्तिशाली होता जाता है। ध्यान योग का सफल साधक स्पष्ट रूप से यह अनुभव करता है कि शक्ति के द्वार उसके लिए खोल दिए गये हैं। वह अपनी अन्तर्निहित शक्तियों को जगाने की स्थिति में हो जाता है, आत्मिक शक्तियों के जागरण से वह महान से महानतम

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

बनने की ओर अग्रसर होता है। शक्ति के मूल स्रोत के द्वार खुल जाने पर उसके लिए ईश्वरीय साम्राज्य में प्रवेश पाने की आज्ञा मिल जाती है। इस स्थूल शरीर के रहते भी वह जीवन मुक्त हो जाता है, वह आनन्द के समुद्र में ही समाधिस्थ रहता है, अशान्ति और दुःख की हलकी-किरणों का भी उसके अन्तःकरण में प्रवेश नहीं कर पाता। ऐसा साधक धन्य हो जाता है।

तेज की वृद्धि--

ध्यान योग के अनुभवी साधकों का कहना है कि ध्यान के निरन्तर अभ्यास से योगी में एक अद्भुत तेज की उत्पत्ति होती है। वह तेज इतना तीव्र और शक्तिशाली होता है कि कामदेव रूपी कैसी भी शक्तिशाली पाप वृत्तियाँ उसकी साधना में बाधा डालने के लिए आ जाएँ वह क्षण में अपने त्रिनेत्र रूपों से अपने शत्रु को जला कर राख कर देती है। इस प्रचण्ड तेज के सामने पापों का अस्तित्व वैसे री असम्भव है जैसे प्रकाश के सामने अन्धकार का। पश्चिमी वैज्ञानिकों ने भी इसका परीक्षण किया है और वैज्ञानिक ढङ्ग से इसकी व्याख्या की है। श्री विक्टर० ई० क्रोमर ने अपने अनुभव से लिखा है कि ध्यान करने पर ओज शक्ति उत्पन्न होती हैं। जब साधक किसी वस्तु पर ध्यान एकाग्र करता है तो ऐसा लगता है कि ओज शक्ति उसकी ओर दौड़ी आ रही है। यदि ईश्वर पर ध्यान जमाया जाय तो मस्तिष्क के मार्ग से यह शक्ति अवतरित होती है। इससे एक प्रकार की चुम्बकीय शक्ति की एकतानता का धारावत अनुभव होता है। सूक्ष्म-द्रष्टा योगी अपनी सूक्ष्म दृष्टि से इन रंगों को भी देख सकते हैं। ऊपर से शक्ति के अवतरण के सौन्दर्य वर्णन असम्भव है।"

एकता की प्राप्ति--

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

ध्यान योग की महिमा को 'तिलचट्टे' के उदाहरण से सुविधा

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri
पूर्वक समझा जा सकता है। कहते हैं तिलचट्टे के कीड़ों को भौंरा पकड़कर अपने स्थान पर ले जाता है और उसका हाथ, पैर तोड़कर उनके चारों ओर भों-भों करके मँडराता है। तिलचट्टे, को अपनी मृत्यु सामने दिखाई देती हैं। भय से उसका चित्त भौंरे की ओर ही लगा रहता है और कुछ समय में तदाकार बन जाता है। साधक की ध्यानावस्था जब परिपक्व हो जाती है तो उसका अपमान समाप्त हो जाता है, ईश्वर की ओर निरन्तर चित्त वृत्तियों के लगे रहने से उसकी आकृति का भी परिवर्तन हो जाता है और जिसका वह ध्यान करता है वह स्वयं भी वही बन जाता है।

स्थूल और सूक्ष्म ध्यान—

ध्यान दो प्रकार का होता है स्थूल और सूक्ष्म। स्थूल ध्यान निम्न प्रकार से किया जाता है। आरम्भ में साधक को उसी विधि का अवलम्बन करना चाहिए।

पिता, माता गुरु आदि किसी पूजनीय व्यक्ति की मूर्ति जिसे हम पहले से भली प्रकार देख चुके हैं, अथवा राम, कृष्ण, शिव आदि किसी देवता की मूर्ति जिससे हमारा हार्दिक अनुराग हो, अथवा नदी पर्वत, सागर वन, उपवन, नगर महल जो हमें सबसे उत्तम रमणीक जान पड़ता है—ऐसी कोई भी मनोनुकूल वस्तु या पदार्थ ध्यान के लिये ग्रहण करना चाहिये। हमको बार-बार उसी पदार्थ का ध्यान, उसकी याद करते रहना चाहिये। ऐसा लगातार करते रहने से हमको स्थूल ध्यान का अभ्यास हो जाएगा। हमारा रत्नमय शरीर को प्रधान वृत्ति स्मृतिशील है। यदि हम किसी पदार्थ के लिए बार-बार स्मृति-शीतला का प्रयोग करते रहेंगे तो वह मूर्ति अथवा पदार्थ को स्पष्ट रूप से प्रत्यक्ष दिखलाई पड़ेगा। जब हमारा यह पक्का हो जाएगा तो हम अपनी ज्ञानेन्द्रियों का विरोध करके अथवा निद्रित होकर
Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri
उस मूर्ति या व्यक्ति से बातचीत भी कर सकते हैं । यह एक प्रकार से स्वप्न के मध्य में किये भाषण की तरह होता है । कारण यह है कि प्राणमय शरीर में अथवा प्राकृतिक प्राणमय क्षेत्र में निद्रावृत्ति को प्रधान माना है साथ ही भाषण आदि भी प्राण के ही कार्य हैं। इसलिए स्वप्न में मूर्ति की बातचीत सुन सकता अथवा उनके अङ्ग संचालन आदि को देख सकना सम्भव होता है । इसी तथ्य को समझ कर साधकगण ध्यान के लिए अपने गुरु अथवा किसी वीतराग पुरुष की मूर्ति को ग्रहण करते हैं ।

इस प्रकार का स्वप्न या सुषुप्ति अवस्था में साक्षात्कार स्थूल ध्यान से सम्बन्ध रखता है और उनके लिए केवल चित्त वृत्ति के प्रयोग की आवश्यकता होती है । इस प्रकार के ध्यान का अभ्यास करते समय साधन के लिए कई प्रकार की सिद्धियाँ प्राप्त हो सकती हैं, पर उनकी तरफ से उदासीन रहना ही श्रेयस्कर है । अपने साधन की सफलता के विषय में ऐसी कोई परीक्षा लेना या ऐसी सिद्धियों के विषय में किसी अन्य व्यक्ति से बातचीत करना उचित नहीं है । ऐसा करना अपने प्रगति मार्ग मे काँटे बोना है । ध्यान का अभ्यास करते समय प्रतिदिन ध्यान में अनुभव आये विषयों को ध्येय वस्तु से सामञ्जस्य करके उनका पर्यालोचन करना लाभजनक है । जब तक साधन में इस प्रकार का सामञ्जस्य उत्पन्न नहीं होता, तब तक उसे पूर्ण नहीं समझना चाहिये और बार-बार अपने कार्यक्रम में दत्तचित्त रहना चाहिए । इस कार्य में त्राटक कर्म का अभ्यास बहुत अच्छा समझा जाता है । ध्यान योग का अभ्यास बढ़ने पर साधक को उन पदार्थों का भी ध्यान करना चाहिए, जिनको अभी तक नहीं देखा है, पर भविष्य में जिनके देखने की सम्भावना है, उनको भी प्रत्यक्ष देखकर वास्तविक वस्तु से उनका मिलान करना चाहिये । इस प्रकार अतीत (भूत) वर्तमान और
Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal
भविष्यात् पदार्थों का ध्यान करके उनको ध्यान में प्रत्यक्ष देखा और

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri
समझा जा सकता है। इतना हो जाने पर ध्यान योग स्थूल साधक सम्पन्न हुआ समझा जा सकता है।

सूक्ष्म ध्यान के लिए पहिले सूर्य मण्डल जैसे विषय का ध्यान करना चाहिए। साधक को विचारना चाहिए कि सूर्य में ऐसी कौन-सी शक्ति विद्यमान जिसके द्वारा उनमें ऐसी तेज और जीवन शक्ति भरी हुई है। ऐसे गूढ़ विषयों का ध्यान करके उनको जानना ही सूक्ष्म ध्यान के अभ्यास की प्रणाली हैं।

स्वामी दयानन्द ने ध्यान की उत्तम विधि का प्रतिपादन करते हुए ऋग्वेदादिभाष्य भूमिका में लिखा है—"धारणा के पीछे उसी देश में ध्यान करने और आश्रय लेने के योग्य जो अन्तर्यामी व्यापक परमेश्वर है। उसके प्रकाश और आनन्द में अत्यन्त विचार, प्रेम और भक्ति के साथ इस प्रकार प्रवेश करना कि जैसे समुद्र के बीच में नदी प्रवेश करती है। उस समय ईश्वर को छोड़कर किसी अन्य पदार्थ का स्मरण नहीं करना चाहिए किन्तु अन्तर्यामी के स्वरूप और ज्ञान में मग्न नहीं हो जाना चाहिये, इसी का नाम ध्यान है।

ध्यान से तेज, ओज, शक्ति और सिद्धि के लाभ तभी प्राप्त होते हैं जब उनका अधिकार पत्र प्राप्त कर लिया जाय। अधिकार पत्र प्राप्त करने का अभिप्राय उसके नियमों का दृढ़ता पूर्वक पालन करना है। नियमों की अवहेलना करने से उपरोक्त लाभों की आशा करना व्यर्थ है।

ध्यानाभ्यास का उत्तम समय प्रातःकाल ब्राह्म मुहूर्त है। मध्याह्न और सन्ध्या समय भी किया जा सकता है। बिना कुछ खाये पीये ध्यान पर बैठना चाहिए। स्थान पवित्र व स्वच्छ हो, वातावरण अनुकूल हो ध्यान योग के साधक को यम नियमों का दृढ़तापूर्वक पालन करना चाहिये। उसका आहार सात्विक और सूक्ष्म हो। मादक द्रव्यों का बहिष्कार आवश्यक है। माँस मछली, गरम मसाले और उत्तेजक पदार्थों
Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

का सेवन न करना चाहिए। छल, कपट, झूँठ, क्रोध, शोक, भय आदि द्वन्द्वों से दूर रहना चाहिए। ध्यानाभ्यासी के लिए वाक् संयम आवश्यक है। अपशब्द, गाली गलोच, व्यर्थ और झूँठ बोलने का त्याग करना चाहिए। आसन का भी अभ्यास होना आवश्यक है। सफलता की उच्च सीढ़ियों तक पहुँचने के लिए ३ घण्टे तक के आसन का अभ्यास होना ही चाहिए। इसे धीरे-धीरे बढ़ना चाहिए।

अतः ध्यान योग के सफल अभ्यास से तेज और ओज वृद्धि होती है, शक्ति केन्द्रों का जागरण होता है मन निर्विषय और एकाग्र होकर अनन्त शान्ति प्रदान करता है, आत्म दर्शन और ब्रह्म साक्षात्कार होते हैं। साधक शक्तियों के आकर्षण का केन्द्र बन जाता है। शक्ति और सिद्धि उसके आज्ञा पालन की प्रतीक्षा में रहती है। उसे कुछ शेष प्राप्त करना नहीं रह जाता। इससे नर से नारायण बनने का क्रम पूरा होता है। इसलिए प्रत्येक श्रेय पथ के पथिक को ध्यान योग का अभ्यास अवश्य करना चाहिए।

वैज्ञानिक स्पष्टीकरण—

ध्यान से उपरोक्त घृणित लाभों का वैज्ञानिक स्पष्टीकरण करते हुए परम पूज्य पं० श्रीराम शर्मा आचार्य ने लिखा है—

"मानव मस्तिष्क बड़ा ही आश्चर्यजनक, शक्तिशाली एवं चुम्बक गुण वाला यन्त्र है। उसका एक-एक परमाणु इतना विलक्षण है कि उसकी गतिविधि, सामर्थ्य और क्रियाशीलता को देखकर बड़े-बड़े वैज्ञानिक हैरत में रह जाते हैं। अणुओं को जब किसी विशेष दिशा में नियोजित कर दिया जाता है तो उसी दिशा में एक लपलपाती हुई अग्नि जिह्वा अग्रगामी होती है। जिस दिशा में मनुष्य इच्छा, आकांक्षा और लालसा करता है, उसी दिशा में, उसी रङ्ग में उसी लालसा में शरीर की शक्तियाँ नियोजित हो जाती है।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

पहले भावनाएँ मन में आती हैं। फिर जब उन भावनाओं पर चित्त एकाग्र होता है तब एकाग्रता एक चुम्बक शक्ति आकर्षण तत्व के रूप में प्रकट होती है और अभीष्ट तत्वों को अखिल आकाश में से खींच लाती है। ध्यान का यही विज्ञान है। इस विज्ञान के आधार पर, प्रकृति के अन्तराल से निवास करने वाली सूक्ष्म आद्यशक्ति को अपनी ओर आकर्षित किया जा सकता है। उसके शक्ति भण्डार को प्रचुर मात्रा में अपने अन्दर धारण किया जा सकता है।"

आदर्श ध्यान योग विधि–

एक अधिकारी विद्वान् ने आदर्श ध्यान योग की विधि इस प्रकार से वर्णित की है:—

'अपने सामने एक आदर्श या आईना रक्खे और घी का दीया इस तरह उसके सामने रक्खे कि उसकी ज्योति दर्पण के मध्य भाग पर प्रतिविम्बित हो। दर्पण के मध्य भाग में सुगन्धित तेल की एक बूँद डाल दें। अनन्त दर्पण के मध्य भाग में जहाँ ज्योति दिख रही हो, वहाँ उस ज्योति की शंखाकृति पर दृष्टि स्थिर करने का अभ्यास करे। इस अभ्यास के समय मौन रहे, मन में कोई बिचार न आने दे और बाहर से आने वाले शब्दों की ओर जिसमें ध्यान न जाय, इसके लिए आगे लिखे अनुसार कणमुद्र का उपयोग करे। केसर, इलायची और जाय–फल समभाग लेकर उसे वस्त्र से छानकर किसी रेशमी कपड़े के टुकड़े में रखकर उसकी पोटली बनाकर इस तरह उसे सीयें कि कान में उनका डाट दिया जा सके। डाट देकर उस पर मोम लगा दे। यह कर्ण मुद्रा कान में लगा कर तब दर्पण में ज्योति के प्रतिबिम्ब की शंखाकृति पर दृष्टि स्थिर करे। शुरू में उष्णता के कारण आँखों से गरम पानी जायेगा उसे जाने दे, बन्द करें। लगभग एक सप्ताह के अन्दर ही पानी का जाना बन्द हो जायेगा। पानी से यदि आँख बीच में ही बन्द

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

हो जाए तो कोई हर्ज नहीं। आँखें पोंछकर फिर से अभ्यास आरम्भ करें। चित्तवृत्ति को स्थिर करके, बिना पलक गिराये जितनी ही अधिक देर तक अभ्यास किया जा सके उतना ही अधिक लाभप्रद है। पहले प्रति दिन दस-पन्द्रह मिनट अभ्यास करे, पीछे धीरे-धीरे घण्टे सवा घण्टे तक बढ़ा ले जाय। जब आध घण्टे तक चित्त को स्थिर रखकर बिना पलक गिराये एकाग्र दृष्टि से देखने का अभ्यास हो जाता है तब इष्टा देवता के दर्शन होते हैं, उनसे सम्भाषण होता है और भूत, भविष्य वर्तमान का ज्ञान आदि अनेक विधि चमत्कार देख पड़ते हैं। परन्तु इन चमत्कारों में न फँस कर साधन भगवतस्वरूप की भावना को दृढ़ रखकर उनका प्रत्यक्ष होते ही उसमें तन्मय हो जाये और इस तरह कृतार्थता लाभ करें।"

अनुभव सिद्ध विधि—

महात्मा आनन्द स्वामी सरस्वती ने ध्यानावस्थित होने की अनुभव सिद्धि, विधि का इस प्रकार मार्गदर्शन किया है:—

"जप करते हुए जब आधा घण्टा या एक घण्टा व्यतीत हो जाय तो जप छोड़ दीजिये और भृकुटि में यह धारणा कीजिए कि यहाँ दीप शिखावत् या चन्दावत् कोई ज्योति है। बार-बार ऐसी धारशा करने से थोड़े दिनों या सप्ताहों या महीनों के पश्चात् यह ज्योति अन्दर की आँखों से दिखलाई देने लगती है। समय कितना लगेगा यह तो अपने चित्त की अवस्था पर निर्भर है। जितनी अधिक निर्मलता होगी, उतनी ही शीघ्रता से ज्योति दीखने लगेगी। कुछ साधकों को ज्योति दिखलाई नहीं देती और उनके स्थान में भृकुटि में खिचावट सी सनसनाहट सी प्रतीत होने लगती है। यह चिह्न भी अच्छा है। इससे यह जान लेना चाहिए सूक्ष्म प्राण की गति वहाँ होने लगी है और ज्यों-ज्यों भृकुटि की विशेष नाड़ी ध्यान से शुद्ध होती जायेगी, यह सूक्ष्म प्राणललाट चक्र

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri
और फिर ब्रह्मारन्ध्र में चला जायेगा। सूक्ष्म प्राण की गति, के साथ चित्त भी वही बन्ध जायगा। इस प्रकार प्रतिदिन कम से कम एक घण्टा जवश्य धारण ध्यान कर लेना चाहिये। यदि अधिक समय किया जा सके तो लाभ अधिक होगा।

निरन्तर ध्यानावस्थित होने का अभ्यास करने और ज्योति अथवा सनसनाहठ का अनुभव करने से बुद्धि की मलीनता दूर होने लगती है। ज्योति इतनी शुभ, अथवा सनसनाहट जितनी तीव्र होती जायेगी निर्मलता, पवित्रता भी उतनी मात्रा में बढ़ती जायेगी।"

योग में ध्यान के तवं आसन पर स्थित होकर १०—१५ मिनट तक त्राटक करना आवश्यक बताया है। त्राटक अपने गुरु के चित्र, अपनी इष्टदेव मूर्ति अथवा स्फटिक मणि का श्रेष्ठ बताया गया है। त्राटक का यह लाभ होता है कि दृष्टि इधर-उधर से हटकर एक ओर केन्द्रित हो जाती है, मन की चंचलता कम होने लगती है। त्राटक के बाद नेत्र बन्द कर लेने चाहिये क्योंकि नेत्र खुले रहने से मन बाह्य वस्तुओं की ओर आकर्षित होता है और नाना प्रकार के विचार मन में आने लगते हैं।

ध्यान से पूर्व मन में दृढ़ सङ्कल्प करना चाहिये कि ध्यान के समय में किसी संसारिक विषय को मन में नहीं लाने दूँगा। न तो कोई संकल्प हो पायेगा, मैं केवल ध्यान ही करूँगा।

जप के समय या किसी अन्य सुविधा के समय भी ध्यान किया जा सकता है। ध्यान के लिए एकान्त व शान्त स्थान का चुनाव करना चाहिए जप समय की विधि तो पालथी मारकर करने की है परन्तु यदि इसे किसी अन्य समय करना हो तो दीवार, वृक्ष के सहारे, मसनद के साथ या आसन कुर्सी पर लेटकर ध्यान साधना की जा सकती है। लेट कर देह को इस प्रकार से शिथिल कर दिया जाये जैसे निर्जीव अनुभव हो रहा हो। अब दोनों नेत्रों को बन्द करके दोनों हाथों को गोदी में रखकर ध्यान करना चाहिये कि चारों ओर नील गगन है।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri
दूर तक कोई भी वस्तु दृष्टिगोचर नहीं हो रही है। प्रलय काल में सृष्टि का नाश हो जाता है, केवल आकाश ही शेष रह जाता है। कोई भी वस्तु कहीं नहीं रह जाती। ऐसी स्थिति का कल्पना चित्र बनाना चाहिए। जब यह भावना स्थिर हो जाए तो यह अनुभव करे कि आकाश में बहुत दूर एक छोटा सा ज्योति पिण्ड दिखाई दे रहा है। यह सूर्य के समान चमकता है अभ्यास होने पर यह निकट आ जाता है, आकर बड़ा हो जाता है, तेज में भी वृद्धि हो जाती है। यदि किसी मूर्ति का ध्यान करना हो तो एक छोटे नक्षत्र के रूप में उनका ध्यान करें। यहाँ ओंकार का ध्यान भी किया जा सकता है। यह चुनाव अपनी रुचि के अनुसार ही करना चाहिये।

आरम्भ में तो अपने इष्टदेव की मूर्ति की छाया धुन्धली सी दिखाई देगी। बार-बार ओझल हो जायेगी। पुनः पुनः उसका ध्यान करना होगा। अभ्यास से यह प्रतिमा पहले से अधिक स्पष्ट दिखाई देने लगती है और अधिक समय तक रहती है। जब ध्यानावरणा सफलता की ओर बढ़ती है तो मूर्ति या चित्र हँसता, बोलता और विभिन्न प्रकार की चेष्टायें करता दिखाई देता है।

ध्यान जितना परिपक्व होता है, अन्तःकरण में उतना ही ब्रह्मतेज बढ़ता जाता है। इससे एक अनुपम दिव्यता का अनुभव होता है जो सूर्य के समान प्रकाशवान होता है। यह तेज शरीर के रोम-रोम में बढ़ता आता है। ऐसा अनुभव होता है कि विशाल सृष्टि में जैसे करोड़ों सूर्य विद्यमान है वैसे ही इस लघु सृष्टि पिण्ड में करोड़ों सूर्यों का प्रकाश हो रहा है। हर रोम उससे प्रकाशित हो रहा है। अन्धकार व अज्ञान का कहीं नाम निशान तक नहीं है। मन पर जो मैल के पर्तें जमे हुए थे, वह सब नष्ट हो गये हैं भस्म हो गए हैं, अथवा धुल गए हैं। अब स्वच्छता, निर्मलता, निष्पापता और दिव्यता की स्थिति ही रह
Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

जाती है। यह स्थिति आने पर साधक अपने को ब्रह्मरूप ही अनुभव करने लगता है।

यह तो ध्यान साधना की अन्तिम अवस्था है। इस अवस्था तक पहुँचते अनेकों प्रकार के अनुभव साधक को होते हैं। जब वह तेज धारण करने की प्रक्रिया को अपनाते ही अभ्यास करता है तो अनेकों बार भिन्न भिन्न रंग व आकार की ज्योतियाँ दिखाई देती है। उनकी गति इधर से उधर होती रहती है कभी तो वह सूर्य की तरह चमकता हुआ पिण्ड होता है, कभी चन्द्र मण्डल के से प्रकाश सा होता है कभी हीरे की सी ज्योति चमकती दिखाई देती है। कभी छोटे-छोटे तारागण चमकते और ओझल होते दृष्टि-गोचर होते हैं। उनकी विभिन्न प्रकार की गति—विधियाँ होती रहती हैं वे एक ओर सेदूसरी ओर भागते हैं बीच में मार्ग वदलते रहते हैं और फिर वापिस अपने मूल स्थान की ओर लौट आते हैं। इनकी चक्राकार गतियां भी दिखाई पड़ती है। वाण के आकर का प्रकाश होता रहता है। यह ज्योतियाँ और प्रकाश पिण्ड सफलता कीं निशानियां हैं, यह शक्ति और सिद्धि की सूचक होती है।

यह गायत्री ध्यान की श्रेष्ठतम विधि है। जिस तरह से सूर्य की किरणों से गर्मी और गतिशीलता की अनुभूति होती हैं, उसी तरह गायत्री ध्यान करते समय यह सशक्त भावना करनी चाहिए कि गायत्री तेज पिण्ड को किरणें अपने ऊपर पड़ने से दिव्यता सात्विकता, निर्मलता निष्पाक्षता सूक्ष्मता का विकास हो रहा है। अल्प-क्रामिक विकास से भी यह मात्रा धीरे-धीरे इतनी बढ जाती है कि साधक ब्रह्मतेज का एक शक्ति पुंज ही बन जाता है।

जब ध्यान साधना अधिक परिपक्व हो जाती है तो हृदय अथवा मस्तिष्क के मध्य में ऐसा अनुभव होता है कि गायत्री का तेज वहाँ स्थिर हो गया है। अपने अन्दर इस तेज की स्थिरता से गायत्री के प्राण से अद्वैत अथवा एकता की अनुभूति होती है ऐसा लगता है कि

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

गायत्री शक्ति हमारे मन व मस्तिष्क में स्थायी रूप से बैठ गई है और वह स्वयं ही इनकी गतिविधियों का सञ्चालर कर रही है, हमारा सर्वस्व गायत्री शक्ति के अधीन है, उन्हीं की इच्छा और आकांक्षा पर हम जीवन के समस्त कार्य कर रहे हैं, अपना कुछ भी स्वार्थ अब नहीं रह गया है प्राणीतात्र का स्वार्थ ही अपना स्वार्थ है, ऐसी अनुभूति होने लगसी है इसी को सिद्धावस्था कहते हैं। यह अवस्था एक दो दिन की साधना से नहीं आती। यहाँ तक पहुँचने के लिए लम्बे समय तक निरन्तर साधना करनी पढ़ती है।

—※—

हवन विधि–

हवन में आम, ढाक, गूलर, पीपल, बरगद, और छोंकर की समिधायें प्रयुक्त की जाती हैं। हवन के लिए हविष्यान्न के रूप में जो एक भाग, चावल दो भाग, तिल तीन भाग और शक्कर चार भाग सामग्री में मिश्रित किये जाते हैं। पञ्च मेवा के लिए बादाम, गोला, छुहारा, किशमिश, चिरोंजी मुनक्का, पिस्ता, अखरोट, काजू और ताल मखाना में से अपनी सुविधा के अनुसार चुनाव किया जाता सकता है। हवन सामग्री में मिलाई जाने वाली विभिन्न औषधियों का विवरण इस प्रकार है:—

चन्दन, अगर, तगर, गूगर, जायफल-जावित्री, दालचीनी तालसी, पत्रा लोंग, बड़ी इलायची, इन्द्र जौ, कपूरकचरी, आँवला, वालछड, नागकेशर गिलोय पटोल पत्रा पँवार के बीज मुलहठीं लाल चन्दन, मोचरस, केसर, असगन्ध शीतल चीनी, बावची, चिरायता, ब्राह्मी, शंखपुष्पी, तुष्करमूल, मजीठ, धाय के फूल, खस, गोखरू, शतावर देवदारू, छारछबीला।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal.

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

हवन के आवश्यक पात्रों में है:—प्राणीता, प्रोक्षणी, स्रुवा, श्रुति और स्पेय ।

विधि:—

प्रात:काल शौच स्नान आदि से निवृत्ति होकर और धुले हुए पवित्र वस्त्र ग्रहण करके हवन पर बैठना चाहिए । हवन कर्त्ता यज्ञोपवीत ग्रहण किये हुए हो अथवा हवन से पहले ग्रहण करले । स्थान ऐसा होना चाहिए जहाँ से धुआँ आसानी से बाहर निकल सके और जमा होकर हवन कर्त्ता के लिये असुविधा जनक न हो । वह स्थान जल से धोना चाहिए अथवा गोबर से लीपना चाहिए । चौकी पर नया अथवा धुला हुआ सुन्दर वस्त्र बिछाना चाहिए । उस पर गायत्री माता के चित्र की प्रतिष्ठा होनी चाहिये । यदि कुण्ड बनाने की सुविधा न हो तो पवित्र मिट्टी या बालू की वेदी बनानी चाहिये । समिधायें—पहले से ही वेदी के अनुरूप छोटी कर लेनी चाहिये ताकि समय पर असुविधा न हो । समिधायें—बिल्कुल सूखी होनी चाहिये अन्याय अग्नि ठीक प्रकार से नहीं जल पायेगी और धुँए से असुविधा रहेगी । हवन का सभी सामान जैसे कि समिधायें, हविष्यान्न, सामग्री, मेवा, पूर्णाहुति, के लिये गोला अथवा सुपारी, मिष्ठान्न, रोल अक्षत, पुष्प, चन्दन, कुश कलावा, धूप, अगरवत्ती कपूर, रुई, माचिस कुश के आसन व हवन पात्र आदि पहले ही ही एकत्रित करके रखने चाहिये ताकि हवन के बीच में आवश्यक सामान लाने के लिये बार-बार उठना न पड़े । सामग्री में आवश्यकतानुसार शुद्ध घी मिला लेना चाहिये । वैजीटेविल घी का प्रयोग इसमें नहीं होना चाहिये । शुद्ध घी की सुविधा न हो तो उसके स्थान हर दूध भी मिलाला जा सकता है । हवन की विधि इस प्रकार है:—

पवित्री करण

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

बायें हाथ में जल लेकर दायें हाथ से उसे ढक लेना चहिये और

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

निम्न मन्त्र के उच्चारण के बाद इसे मस्तक और सिर पर छिड़कना चाहिए और भावना करनी चाहिए कि हमारा स्थूल व सूक्ष्म शरीर दोनों पवित्र हो रहे हैं और सभी प्रकार की अपवित्रतायें हमारे शरीर से बाहर निकाली जा रही है:—

ॐ अपवित्र: पवित्रो वा सर्वावस्थां गतोऽपिवा ।
य: स्मरेत्पुण्डरीकाक्ष स वाह्यभ्यन्तर: शुचि: ॥

आचमन

नीचे लिखे मन्त्रों से तीन बार आचमन करना चाहिए । आचमन का अभिप्राय दाहिने हाथ की हथेली में थोड़ा सा जल डालकर उसका पान करना है । पहले आचमन के साथ यह भावना करनी चाहिए कि मन्त्र उच्चारण से हथेली में रक्खे जल में सत्यरूपी श्वेत किरणों का समावेश हो रहा है और इसके पान से हमारे अन्दर सतोगुणी शक्तियों की बृद्धि हो रही है । दूसरे मन्त्र से पीत वर्ण किरणों को देखते हुए रजोगुणी शक्तियों की वृद्धि की भावना करनी चाहिए । तीसरे मन्त्र के साथ लाल वर्ण की किरणों को जल से मिले हुए देखकर बल प्रधान शक्तियों के जाविर्भाव की दृढ़ भावना करनी चाहिए । भौतिक और आध्यात्मिक शक्तियों की वृद्धि के लिए यह भावना अत्यन्त लाभदायक सिद्धि होती है । इसका लौकिक लाभ यह है कि हवन के मन्त्रों से उच्च उच्चारण से गला सूख न जाये, इसके तर रहने की पूर्व व्यवस्था कर दी गई है ।

शिखा बन्धन:—

ॐ अमृतोपस्तरणमसि स्वाहा ॥१
ॐ अमृतापिधानमसि स्वाहा ॥२
ॐ सत्यं यस: श्रीर्मयि श्री: श्रयतां स्वाहा ॥३

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal
नीचे लिखे मन्त्र का उच्चारण करते हुए शिखा में गाँठ लगानी चाहिए । जिसकी शिखा न हो, वह गीले हाथ से उस स्थान को स्पर्श

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

कर लें। महिलायें केवल अपनी चोटी को गीले हाथ से स्पर्श कर लें। साधन में उपार्जित शक्तियों की ब्रह्मरन्ध्र की ओर से बाहर निकलने से रोकने का महत्वपूर्ण कार्य शिक्षा में ग्रन्थि लगाने से सम्पादित होता है।

चिद्रूपिणी महामाये दिव्यतेजः समन्विते।
तिष्ठ देवि शिखामध्ये तेजोवृद्धि कुरुष्व मे॥

प्राणायाम मन्त्र

प्राणायाम में पूरक, अनन्तर कुम्भक, रेचक और बाह्यकुम्भक-चार भाग होते हैं। पूरक में वायु को बाहर ही रोका जाता है। जितना समय पूरक में लगे उससे आधा अन्तर कुम्भक में लगना चाहिए। पूरक और रेचक का समय बराबर होना चाहिए और अन्तर कुम्भक या बाह्य, कुम्भक का समय—बराबर होना भी उपयुक्त माना गया है। वायु अन्दर खींचते समय यह भावना करनी चाहिए कि अन्दर रोकने पर यह भावना करनी चाहिए कि हमारे अन्दर सतोगुणी शक्तियों की प्रतिष्ठा हो चुकी है। वायु को वाहर निकालते समय यह भावना करनी चाहिये कि सतोगुणी शक्तियों की प्रतिष्ठा होने पर तमोगुणी शक्तियों का निष्कासन हो रहा है। वायु को बाहर रोकने पर यह भावना करनी चाहिए कि तमोगुणी शक्तियाँ अब हमारे शरीर से बाहर जा चुकी है, उनके अन्दर आने का मार्ग अवरुद्ध हो चुका है। उन पवित्र भावनाओं के साथ प्राणायाम की साधना करने से विशेष प्राणायाम करना चाहिए।

ॐ भूः ॐ भुवः ॐ स्वः ॐ महः ॐ जनः ॐ तपः ॐ सत्यम्। ॐ भूर्भुवः स्वः तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

धियो यो नः प्रचोदयात् । ॐ आपोज्योति रसोमृतं ब्रह्म भूर्भुवः स्वः ॐ ॥

न्यास–

यह क्रिया शरीर के विभिन्न शक्ति केन्द्रों को जाग्रत करने और उनमें शक्तियाँ स्थापित करने के लिए की जाती है। बायें हाथ की हथेली में थोड़ा जल लेकर दायें हाथ की पांचों उङ्गलियाँ जोड़ कर नीचे लिखे मन्त्रों से शरीर के विभिन्न अगों का स्पर्श करना चाहिए और हर अङ्ग स्पर्श के साथ यह भावना करनी चाहिए कि मेरा यह अङ्ग तेजस्वी, पवित्र और शक्तिशाली बन रहा है।

ॐ वाङ्मे आस्येस्तु । (मुख को)
ॐ नसोर्मेप्राणोस्तु । (नासिका के दोनों छिद्रों को)
ॐ अक्ष्णोर्मे चक्षुरस्तु । (दोनों नेत्रों को)
ॐ कर्णयोर्मे श्रोत्रमस्तु । (दोनों कानों को)
ॐ वाह्वोर्मे बलमस्तु । (दोनों बाँहों को)
ॐ ऊर्वोर्मेओजोस्तु । (दोनों जंघाओं को)
ॐ अरिष्टानिमेऽङ्गानि मनुस्तन्वा मे सह सन्तु ।

पृथ्वी पूजनम्

पृथिवी को हमारे धर्माचार्यों ने माता के उच्च पद से विभूषित किया है क्योंकि जिस प्रकार माता अपने शिशु का लालन-पालन करती है, उसी प्रकार पृथ्वी भी मातृवत् प्राणी-मात्र के लिए हर प्रकार की खाद्य-सामग्री प्रस्तुत करती है। पृथ्वी को देवता की संज्ञा भी इसीलिए दी जाती है क्योंकि वह अपने उदार स्वभाव से हर समय प्राणी—मात्र के कल्याण कार्यों से व्यस्त रहता है। करोड़ों प्राणी उसकी छाती पर निवास करते हैं, अपने लाभ के लिए उसकी छाती को चीरते, फाड़ते हैं। परन्तु फिर भी वह दिव्य रूप से मुस्कराती रहती है।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

उसके इस देव स्वभाव से प्रेरणा प्राप्त करने के लिए उसकी पूजा—अर्चना की जाती है।

नीचे लिखे मन्त्र का उच्चारण करते हुए पृथ्वी पर जल, अक्षत, पुष्प और मिष्ठान छोड़ना चाहिए और भावना करनी चाहिए कि पृथ्वी के स्वभावगत उपरोक्त गुणों को हम अपनी अन्तरात्मा में धारण कर रहे हैं।

ॐ पृथ्वि ! त्वया धृता लोका देवि त्वं विष्णूनाधृता।
धृता त्वं च धारय मां देवि पवित्रं कुरु चासनम्।

कलशश्जनम्

कलश मिट्टी का हो तो सुन्दर है, उसे पीले रङ्ग में रङ्ग लेना चाहिए और स्वस्तिक आदि शुभ चिन्ह उस पर बनाने चाहिए। मुख पर पञ्च वल्लभ और नारियल रखना चाहिए। मिट्टी के कलश की सुविधा न हो तो पीतल का लोटा आदि भी प्रयुक्त किया जा सकता है। एक सुन्दर चौकी पर अष्ट दल-कमल बनाकर उस पर कलश की स्थापना करनी चाहिए। जल वरुण देवता का प्रतीक है। जल को वेदों ने अमृत की संज्ञा दी है। प्राणी-मात्र के पोषण के लिए इसका भी महत्वपूर्ण स्थान रहता है। पिण्ड और ब्रह्माण्ड सब ओर यह व्यापक रूप में फैला हुआ है। वरुण देवता से प्रेरणायें प्राप्त करने के लिए इसका पूजन किया जाता है। पञ्च पल्लव शोभा वृद्धि और नारियल पूर्णता का प्रतीक है। हमें श्रेष्ठता को प्राप्त करना चाहिए और अपूर्णता से पूर्णता की ओर पग बढ़ाने चाहिये, यह कलश पूजन का सन्देश है।

निम्न मन्त्रों का उच्चारण करते हुए रोली अक्षत, चन्दन, धूप, दीप, नैवेद्य पुष्पादि से कलश का पूजन करना चाहिए।

ॐ कलशस्य मुखे विष्णुः कण्ठे रुद्रः समाश्रितः।
Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal
मूले तत्र स्थितो ब्रह्मा मध्ये मातृगणाः स्मृताः ।१

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

कुक्षौ तु सागराः सर्वे सप्तद्वीपाः बसुन्धराः ।
ऋग्वेदोथ यजुर्वेदो सामवेदो ह्यथर्वणः ।२
अगेश्च संहिताः सर्वे कलशन्तु समाश्रिताः ।
अत्र गायत्री सावित्री शान्ति पुष्टिकरी सदा ।३
त्वयि तिष्ठन्ति भूतानि त्वयि प्राणाः प्रतिष्ठताः ।
शिवः स्वयं त्वमेवासि विष्णुस्त्व च प्रजापति ।४
आदित्याः वसवो रुद्राः विश्वेदेवाः स पैतृकाः ।
त्वयि तिष्ठन्ति सर्वेऽपि यतः कामफलप्रदा ।५
त्वत्प्रसादादिमां यज्ञं कर्तुमीहे जलोद्भवः ।
सान्निध्यं कुरु मे देव प्रसन्नो भव सर्वदा ।६

देव पूजन

देवता कहते हैं देने वाले को और लवता कहते हैं, लेने वाले को लेने का स्वभाव बनाने से अनेकों प्रकार के स्वार्थ मन में उत्पन्न होते हैं। यह स्वार्थ ही पतन, पाप और बुराइयों का कारण है। उत्थान के लिए स्वभाव में परिवर्तन होना आवश्यक है। स्वार्थ से परमार्थ के स्वभाव में जब तक परिवर्तन न हो जाये, तब तक उत्थान होना सम्भव नहीं है। इसलिए हमारे ऋषियों ने देव स्वभाव उच्चगुणों से ओत प्रोत व्यक्तियों के सम्पर्क में रहने का परामर्श दिया है। सूर्य, चन्द्रमा, पृथ्वी, जल और गुरु आदि को भी देवता की संज्ञा दी गई हैं। उनके पूजन का अभिप्राय उनमें अवस्थित गुणों का धारण करने की प्रेरणा प्राप्त करना है।

निम्न मन्त्रों के पाठ के साथ देव-पूजन करना चाहिए:—
गुरुर्ब्रह्मा गुरुर्विष्णु गुरुर्देव महेश्वरः ।
गुरुरेव परब्रह्म तस्मै श्री गुरुवे नमः ।१
अखण्डमण्डलाकारं व्याप्तं येन चराचरम् ।
Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal
तत्पदं दर्शितंयेन तस्मै श्री गुरुवे नमः ।२

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

आयातु वरदे देवि अक्षरे ब्रह्मवादिनी ।
गायत्रिच्छन्दसां माता ब्रह्मयोनिर्नमोऽस्तुते ।३
अभाप्सितार्थसिद्धयर्थपूजिता यः सुरासरैः ।
सर्वविघ्नहरस्तस्मै गणाधिपतये नमः ।४
सर्वमङ्गलमांगल्ये शिवे सर्वार्थसाधिके ।
शरण्ये त्र्यम्बके गौरि नारायणि नमोऽस्तुते ।५
शुक्लाम्बरं देव शशिवर्णं चतुर्भुजम् ।
प्रसन्नवदनं ध्यायेत्सर्वविघ्नोपशान्तये ।६
सर्वदा सर्वकार्येषु नास्ति तेषाममङ्गलम् ।
येषां हृदिस्थो भगवान्मगलायतनो हरिः ।७
विनायकं गुरुं भानुं ब्रह्माविष्णुमहेश्वरान् ।
सरस्वती प्रणम्यदौ शान्तिकार्यार्थसिद्धये ।८
मगलं भगवान् विष्णु मङ्गलं गरुड़ध्वजः ।
मङ्गलं पुण्डरोकाक्षं मङ्गलायाननो हरिः ।९
त्वं वै चतुर्मुखो ब्रह्मा सत्यलोक पितामहः ।
आगच्छ मंगले वास्मिन् मम सर्वार्थसिद्धये ।१०
शान्ताकारं भुजंगशयनं पद्मनाभं सुरेशम् ।
विश्वाधारं मगनहृशं मेघवर्णं शुभांगम् ।
लक्ष्मीकान्तं कमलनयनं योगिभिर्ध्यानगम्यम् ।
वन्दे विष्णुं भवभयहरं सर्वलोकैकनाथम् ।११
वन्दे देवमुमापतिं सुरगुरु वन्दे जगत्कारणम् ।
वन्दे पन्नागभूषणं मृगधरं वन्दे पशुनाम्पतिम् ।
वन्दे सशशांकवह्नियनं मुकुन्दप्रियम् ।
वन्दे भक्त जनाश्रयं च वरदं शिवं शङ्करम् ।१२
ॐत्र्यम्बक यजामहे सुगन्धिम्पुष्टिवर्धनम् ।
Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal
उर्वारुकमिव बन्धनान्मृत्योर्मुक्षीय माऽमृतात् ।१३

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

दुर्गे स्मृता हरसि भीतिमशेष जन्तोः ।
स्वस्थैः स्मृता मतिमतीव शुभां ददासि ।
दारिद्रय दुःखभयहारिण का त्वदन्या।
सर्वोपकारकारणाय सदार्द्रचित्ता ।१४

शुक्लां ब्रह्मविचारसारपरमाम द्यां जगद्व्यापिनीं ।
वींणापुस्तकधारिणीमभयदां जाड्यन्धकारापहाम् ।१५
हस्ते स्फटिक मालिकां विदधतीं पद्मापने संस्थितां ।
वन्दे तां परमेश्वरीं भगवतीं बुद्धिप्रदां शारदाम् ।
आर्द्रां पुष्करिणीं पुष्टि सुवर्णां हेममालिनीम् ।
सूर्यां हिरण्यमयीं लक्ष्मीं जातवेदो म आवह ।१६
कालिकां तु कलातीतां कल्याणमृदयां शिवाम् ।
कल्याणजननीं नित्यं कल्याणी पूजयाम्यहम् ।१७

विष्णुपादाब्जसम्भूते गङ्गे त्रिपथगामिनी ।
धर्मद्रवेति विख्याते पापं मे हरि जाह्नवि ।१८
पुष्कराद्यानि तीर्थानि गङ्गाद्याः सरितस्तथा ।
आगच्छन्तु पवित्राणि पूजाकाले सदामम ।१९
ब्रह्मा मुरारिस्त्रिपुरान्तकारी भानुः शशीभूमिसुतो बुधश्च
गुरुश्च शुक्रः शनिराहुकेतवः सर्वेग्रहाः शान्ति करा भवन्तु ।२०

गौरी पद्मा शची मेधा सावित्री विजया जया ।
देवसेना स्वधा स्वाहा मातरो लोकः मातरः ।२१
हृष्टिः पुष्टिस्तिथा पुष्टिरात्मनः कुलदेवता ।
गणेशेनाधिकाह्येता वृद्धौ पूज्याश्च षोडशः ।२२
कीर्तिलक्ष्मीधृतार्मेधा सिद्धिः प्रज्ञा सरस्वती ।
मांगल्येषु प्रपूज्याश्च सप्तैता दिव्यमातरः ।२३
Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal
नागपृष्ठसम रूढ शूलहस्तं महानलन् ।

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

पातालनायक देवै वासदेवं नमाम्यहम् ।२४
क्षेत्रपालान्नमस्यामि सर्वानिष्टनिवारकान् ।
अस्य योगस्य सिद्ध् यर्थं पूजथाराधितान् मया ।२५
ॐ सिद्धि बुद्धि सहित श्रीमन्महागणाधिपतये नमः ।
ॐ लक्ष्मीनारायणाभ्यन्नमः ।
ॐ उमामहेश्वराभ्यांनमः ।
ॐ वाणीहिरण्यगर्भाभ्यांनमः ।
ॐ शचींपूरन्दराभ्यान्नमः ।
ॐ मातृ पित्र चरण कमलेभ्यो नमः ।
ॐ कुलदेवताभ्यो नमः ।
ॐ इष्टदेवताभ्यो नमः ।
ॐ ग्रामदेवताभ्यो नमः ।
ॐ स्थानदेवताभ्यो नमः ।
ॐ वास्तुदेवताभ्यो नमः ।
ॐ सर्वेभ्यो देवेभ्यो नमः ।
ॐ सर्वेभ्यो ब्राह्मणेभ्यो नमः ।
ॐ सर्वेभ्यो तीर्थेभ्यो नमः ।
ॐ एतत्कर्म प्रधान श्री गायत्रीं देव्यै नमः ।
ॐ पुण्य पुण्याहं दीर्घमायुरस्तु ।

षोडशोपचार पूजनम्

देव-पूजन का उद्देश्य उसके प्रति श्रद्धा और सद्भावना प्रकट करना होता है । जिस तरह अपने घर में कोई अतिथि आता है, तब उसे देवता मानकर उसकी हर प्रकार से सेवा की जाती है, उसी तरह से देवता के प्रति श्रद्धा प्रकट करने के लिए आसन पाद्य, अर्घ्य आदि सोलह प्रकार की विभिन्न वस्तुएं समर्पित करके उनका पूजन किया जाता है ।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

मन्त्र इस प्रकार है:—

ॐ सर्वेभ्यो नमः—आवाहयामिस्थापयामि ।१
आसनं समर्पयामि ।२
पाद्यं समर्पयामि ।३
अर्घ्यं समर्पयामि ।४
आचमनं समर्पयामि ।५
स्नानम् समर्पयामि ।६
वस्त्रम् समर्पयामि ।७
यज्ञोपवीतं समर्पयामि ।८
गन्धम् समर्पयामि ।९
पुष्पाणि समर्पयामि ।१०
धूपम् समर्पयामि ।११
दीपम् समर्पयामि ।१२
नैवेद्यम् समर्पयामि ।१३
अक्षतान् समर्पयामि ।१४
ताम्बूलपूगी फलानि समर्पयामि ।१५
दक्षिणाम् समर्पयामि ।१६
ततो नमस्कारं करोमि ।
नमः सर्वहितार्थाय जगदाधार हेतवे ।
साष्टांगऽयं प्रणामस्ते प्रयत्नेन मया कृतः ।
नमोस्त्वनन्त्राय सहस्रमूर्तये सहस्रपादाक्षिशिरोरुवाहवे ।
सहस्र नाम्ने पुरुषाय शाश्वते सहस्रकोटियुगधारिण नमः ।

चन्दन धारणम्

चन्दन लगाने से दुर्गन्ध दूर होती है, मस्तिष्क में शक्ति और
Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal
ठण्डक आती है जिससे वह स्वस्थ रहता है। 'इसे शांति और शीतलता का

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

प्रतीक माना गया है। मानसिक सन्तुलन स्थिर रखने के लिए इसे एक उत्तम मङ्गलमय पदार्थ की संज्ञा दी गई है।

निम्न मन्त्र का उच्चारण करते हुये मस्तक पर चन्दन लगाना चाहिये।

चन्दनस्य महत्पुण्यं पवित्रं पापनाशनम् ।
आपदा हरते नित्यं लक्ष्मीतिष्ठति सर्वदा ।।

स्वस्तिवाचनम्

वेद मन्त्रों में शिक्षा और प्रेरणा से साथ-साथ विभिन्न प्रकार की शक्तियाँ भी निहित रहती हैं। मन्त्रों में ध्वनि का विशेषता रहता है। अलग अलग मन्त्र विभिन्न प्रकार के उद्देश्यों की पूर्ति करते हैं। स्वस्तिवाचन के मन्त्र कल्याण कारक है, इनके पाठ से शान्ति और सफलता की सिद्धि होती है। इसके उच्चारण से प्रत्यक्ष प्रतीत होता है कि मन में प्रफुल्लता और आनन्द की लहरें उमड़ रही है। प्रत्येक कल्याणकारी कार्य में उनका उच्चारण किया जाता है।

दायें हाथ में अक्षत, पुष्प और जल लेकर निम्न मन्त्रों का उच्चारण करना चाहिए।

ॐ गणानांत्वा गणपति ँ हवामहे प्रियणांत्वा प्रियापति ँ हवामहे निधोनां त्वा निधिपति ँ हवामहे वसोमम आहम-जानि गर्भ-धमात्वमजासि गर्भधम् ।१

ॐ स्वस्तिनः इन्द्रो वृद्धश्रवाः स्वास्तिनः पूषा विश्वेदेवाः। स्वस्तिस्ताक्ष्योऽरिष्टनेमिः स्वस्तिनो वृहस्पतिर्दधातु ।१

ॐ पयः पृथिव्यां पयऔषधीषु पयोदिव्यन्तरिक्ष पयोधाः। पयस्वतीः प्रदिशः सन्तु मह्यम् ।३

ॐ विष्णुः रराट्मसि विष्णोः शनेप्त्रेस्थो विष्णो स्यूरसि विष्णोर्ध्रुवोऽसि । वैष्णवमसि विष्णवेत्वा ।४

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

अग्निर्देवता वातो देवता सूर्यो देवता चन्द्रमा देवता वसवो

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

देवता रुद्रो देवता आदित्या देवता मरुतो देवता विश्वेदेवादेवता वृहस्पतिर्देवतेन्द्रो देवता वरुणो देवता ।५

ॐ द्यौः शान्तिरन्तरिक्षꣳ शांतिः पृथिवी शान्तिरापः शान्तिरोषधयः शान्तिः वनस्पतयशान्तिविश्वेदेवता शान्ति ब्रह्म शान्तिः सर्वꣳशान्तिः शान्तिरेव शान्तिः सामा शातिरेधि ।६

ॐ विश्वानिदेव सवितुर्दुरतानि परासुव । यद्भद्रम् तन्न आ सुव ।७

ॐ शान्ति ! शान्ति !! शान्ति !!!
सर्वारिष्टा सुशान्तिर्भवतु ।

रक्षा विधानम्

यज्ञ अथवा शुभ व श्रेष्ठ कार्यों में आसुरी शक्तियाँ प्रायः विघ्न डोलती रहती हैं । प्राचीन काल में भी असुरों ने यज्ञों को असफल करने के लिए विशेष प्रयत्न किये थे । देव शक्तियों ने उनके विरुद्ध संघर्ष छेड़ा । यह संघर्ष ही शास्त्रों में देवासुर संग्राम के नाम से वर्णित है । विश्वामित्र अपने यज्ञ की रक्षा के लिए भगवान राम और लक्ष्मण को ले गए थे । प्रत्येक यज्ञ सफलता पूर्वक सम्पन्न हो जाये, इसके लिए देव शक्तियों का आवाहन किया जाता है ताकि वे आसुरी शक्तियों को नष्ट करके यज्ञ को निर्विध्न रूप से सम्पन्न कराने में सहयोग दें ।

बायें हाथ में अक्षत लेकर दाहिने हाथ से निम्न मन्त्रों का उच्चारण करते हुए जिस दिशा का जहाँ वर्णन हो, उस दिशा में इन्हें फेंकना चाहिये । और भावना करनी चाहिए कि दशों दिशाओं में देवशक्तियाँ हमारे यज्ञ कार्य को आसुरी शक्तियों से सुरक्षित रख रही है ।

ॐ पूर्वे रक्षतु वाराहः आग्नेयां गरुडध्वजः ।
Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal
दक्षिणे पद्मानाभस्तु नैर्ऋत्यां मधुसुदनः ।१

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

पश्चिमे चैव गाविन्दो धायव्यां तु जनार्दन ।
उत्तरे श्रीपति रक्षेदशान्यां हि महेश्वरः ।२
ऊर्ध्वं रक्षत धाता वो ह्यधोऽनन्तश्च रक्षतु ।
अनुक्तमपि यत् स्थानं रक्षत्वीशो ममाद्रिधृक् ।३
अपसर्पन्तुये भूता ये भुवि संस्थिता:।
ये भूता विघ्नकर्तारस्ते गच्छन्तु शिवाज्ञया ।४
अपक्रामन्तु भूतनि पिशाचा: सर्वतादिशम् ।
सर्वेषामविरोधेन यज्ञकर्मसमारभे ।।

अग्निस्थापनम्

अग्नि को देवताओं का दूत माना जाता है यह मान्यता है कि अग्नि में जो आहुतियां डाली जाती हैं, उनको अग्नि देव-शक्तियों तक पहुँचाता है । इससे अग्नि का यज्ञ में प्रमुख स्थान माना जाता है । इसीलिए इसकी स्थापना विधि विधान और परम श्रद्धा के साथ की जाती है ।

किसी चम्मच में अग्नि रखकर या कपूर जलाकर निम्नलिखित मन्त्रों का पाठ करते हुए श्रद्धा सहित हवन कुण्ड में अग्नि की स्थापना करनी चाहिए । अग्नि स्थापना के पूर्व हवन कुण्ठ या वेदी पर 'ॐ र' लिखना चाहिए ।

ॐ भूर्भुवः स्वद्यांरिव भूम्ना पृथिवी ववरिम्णा । तस्यास्ते पृथिवि देवयजनि पृष्ठेऽग्निमन्नादमन्न द्यायादधे । अग्निं दूतं पुरोदधे हव्यवाहमुपब्रुवेद देवांऽसासादयाहि । ॐ अग्नये: नमः । अग्नि आवाहयामि स्थापयामि इहागच्छइहातिष्ठ । इत्या वाह्य पंचोपचारैः पूजयेत् ।

अग्निप्रदीपनम्

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

अग्नि पर छोटे-छोटे काष्ठ डाल कर पखे से अग्नि को प्रदीप्त

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

करना चाहिये और नीचे लिखे मन्त्र का उच्चारण करना चाहिये :—

ॐ उद्बुध्यस्थाग्ने प्रति जागृति त्वमष्ठिा पूर्त्तेस ँ सृजेथायत्रच अस्मन्त्सधस्थे अध्युत्तरस्मिन् विश्वेदेवा यजमानश्च सीदत ।

समिधाधानम्

आठ-आठ अगुल की चार समिधायें लें। नीचे लिखे प्रत्येक मन्त्र का पाठ करके और एक-एक करके प्रत्येक समिधा को घी में डालना चाहिये।

(१) ॐ अयत्त इध्म आत्मा जातवेदस्तनेध्यस्व वर्धस्व। चेद् वधय चास्मान प्रजता पशुभिर्ब्रह्मवर्च से नान्नद्येन समेधये, स्वाहा। इदमग्नये जातवेदसे इदं न मम्।

(२) ॐ समिधाग्नि दुस्वयत धर्तैर्बोधयता तिथिम् अस्मिन् हव्यांजुहोतन, स्वाहा। इदमग्नये इदं न मम।

(३) ॐ सुसमिद्धाय शोचिषे धृतं तीव्रं जुहोयन। अग्नये जातवेदसे स्वाहा। इदमग्नये जातवेदसे इदं न मम।

(४) ॐ तंत्वा समिद्भिरागरो घृतेन वर्धयामिसि। बृहच्छाचा तविष्ठ्य स्वाहा। इदमग्नया आगरसे इदं न मम।

जलप्रसेचनम्

स्थाई कुण्ड के चारों ओर एक नली सी बनाई जाती है जिसमें जल भर दिया जाता है ताकि चींटी या अन्य जीव जन्तु कुण्ड की ओर आकर नष्ट न हो जावें। कुण्ड के चारों ओर आचमनी या पञ्च पात्र से जल डालना या छिड़कना इसी उद्देश्य का प्रतीक है। नीचे दिशाओं का संकेत है। मन्त्र का उच्चारण करते हुये उस दिशा में जल छिड़कना चाहिये।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

ॐ आदित्येऽनुमन्यस्व ॥ (इति पूर्वे)

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

ॐ अनुमतेऽनुमन्यस्व ।। (इति पश्चिमे)
ॐ सरस्वत्यनुमन्यस्व ।। (इति उत्तरे)

देव सविता प्रबिता प्रसुव: यज्ञं प्रणव यज्ञपतिम् भगाय। दिव्यो गन्धर्व केतपू केत न पुनातु: वाचस्पतिर्वाचं न: स्वदतु (चारों ओर)।

आज्याहुति होम:

इस विधान के अनुसार पहले केवल सात आहुतियाँ शुद्ध घी से दी जाती हैं। हर मन्त्र के उच्चारण के बाद "स्वाहा" और फिर "इदं न मम" का उच्चारण करके श्रुवा से बचा हुआ घी बायें हाथ को रक्खे हुए प्रणीता अथवा जल पात्र टपकाना चाहिए। यही टपकाया हुआ घी अवघ्राण के समय प्रयुक्त किया जाता है। मन्त्र इस प्रकार है:—

(१) ॐ प्रजापतये स्वाहा। इदं प्रजापतये इदं न मम।
(२) ॐ इन्द्राय स्वाहा। इदमिन्द्राय इदं न मम।
(३) ॐ अग्नये स्वाहा। इदमग्नये इदं न मम।
(४) ॐ सोमाय स्वाहा। इदं सोमाय इदं न मम।
(५) ॐ भू: स्वाहा। इदमग्नये इदं न मम।
(६) ॐ स्व: स्वाहा। इदं सूर्याय इदं न मम।
(७) ॐ स्व: स्वाहा। इदं सूर्याय इदं न मम।

गायत्री मन्त्र द्वारा आहुति

गायत्री हिन्दू धर्म का गुरु मन्त्र महा मन्त्र है। यज्ञोपवीत धारण करते समय द्विज को इसी महा-मन्त्र की दीक्षा दी जाती है। इससे [illegible] यह [illegible] जाता है कि वह गायत्री के स्मरण, पाठ अथवा जाप के कन्धे पर ली गई जिम्मेदारी को तत्परता पूर्वक निभाये। अब

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

गायत्री मन्त्र का उच्च स्वर से उच्चारण करते हुए आहुति देनी चाहिए आहुत देते समय पर इसबात का ध्यान रक्खा जाये मन्त्र का उच्चारण सस्वर होना चाहिए। सामग्री मध्यमा और अनामिका अँगुलियों पर लेकर अँगूठा लगाकर हवन कुण्ड में इस प्रकार झुककर डालनी चाहिए कि वह पूरी हवन कुण्ड में ही जाये। बाहर न बिखरने पावे । स्वाहा कि उच्चारण के बाद ही आहुति देनी चाहिये। गायत्री मन्त्र इस प्रकार हैं—

ॐ भुभु्वः स्वः तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य
धीमहि धियो यो नः प्रचोदयात् ।
इद गायत्र्यं इदं न मम ।

स्विष्टकृत होम

मिष्ठान—प्रसन्नता, प्रफुल्लता और आनन्द का प्रतीक होता है। वह देवताओं को श्रद्धा से अर्पण किया जाता है। देवता इससे प्रसन्न होकर साधक को अधिक प्रसन्नता और आनन्द प्रदान करते हैं।

आवश्यक आहुतियाँ देने के बाद बड़े चम्मच में खीर, हलुओं, मिष्ठान और घी डालकर निम्न मन्त्र का उच्चारण करते हुए आहुति देनी चाहिए:—

ॐ यदस्य कर्मणो त्यरीरिचं यद्वान्यूनमिहाकरं अग्निष्टत् स्विष्टकृद्विद्यात्सर्वं स्विष्टं सुयुत करोतु मे। अग्नये स्विष्टकृते सुहुतहुते सर्वप्रायश्चित्ताहुतीनां कामामा समर्धयित्रे सर्वान्नः कामान् समर्धय। इदमग्नये स्विष्टकृते इदंन मम ॥

पूर्णाहूति

पूर्णाहूति हवन के सफलता पूर्वक सम्पन्न होने के सूचक हैं। इसमें जिस मन्त्र का प्रमुख रूप से उच्चारण किया गया है, उसका अभिप्राय यह है कि 'वह परब्रह्म परमात्मा सब प्रकार से पूर्ण है और यह विश्व भी पूर्ण ही है। उस पूर्ण से यह पूर्ण प्रकट हुआ है। पूर्ण से पूर्ण को निकालने पर पूर्ण ही शेष रह जाता है। पूर्णता की भावना

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

की स्थापना अथवा जाग्रति के लिये ही पूर्णाहुति का विधान बनाया गया है। तभी इसमें नारियल अथवा सुपारी आदि पूर्ण वस्तुएँ ही प्रयुक्त होती हैं।

पूर्णाहुति के लिए एक गोले-में छेद करके उसमें घी भर लेना चाहिए। उसके चारों ओर लाल वस्त्र व कलावा लपेटना चाहिए और उसके मुख पर पुष्प रखकर नीचे लिखे मन्त्र का उच्चारण के साथ आहुति देवी चाहिए। गोले के अभाव में सुपारी अथवा हवन सामग्री का प्रयोग किया जा सकता है।

ॐ पूर्णमदः पूर्णमिदं पूर्णमुदच्यते।
पूर्णस्य पूर्ण मादाय पूर्णमेवावशिष्यते।१
ॐ पूर्णादर्विपरापत सुपूर्णा पुनरावत।
व नेव विक्रणा व्हाइसमूर्ज ँ शतक्रतो स्वाहा।२
ॐ सर्वं वै पूर्णं ँ स्वाहा।

वसोधारा

हवन करने के बाद जब यज्ञ कुण्ड में अधिक सामग्री एकत्रित हो जाती हैं और अग्नि अच्छी तरह से प्रदीप्त नहीं होती तो अग्नि को प्रदीप्त करने वाली किसी विशिष्ट वस्तु की आवश्यकता रहती है। इसीलिये अग्नि के चारों ओर धारा से किसी चम्मच के द्वारा घी डाला जाता है ताकि सब ओर अग्नि प्रज्वलित हो जाय और हवन सामग्री भस्म हो जाये।

वसोधारा के साथ यह भावना करनी चाहिये कि जिस तरह से घृत धारा से अग्नि प्रदीप्त हो रही है उसी तरह से मेरे मन के अन्धकार में ज्ञान की रश्मियाँ फैल रही हैं, श्रेष्ठ शक्तियाँ जाग्रत हो रही हैं और अमृतधारा के टपकने से शान्ति, ज्ञान और प्रसन्नता की गंगाधारा प्रवाहित हो रही है। मन्त्र इस प्रकार है—

ॐ वसोः पवित्रमसि शतधारं वसो पवित्रमसि सहस्र

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal.

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

धारम् । देवस्त्वा सविता पुनातु वसोः पवित्रेण शतधारेण सुप्ता थामधुः स्वाहा ।

आरती

आरती का उद्देश्य यज्ञ भगवान् के प्रति श्रद्धा और समान प्रकट करना होता है। आरती में जलने वाला दीपक ज्ञान का प्रतिनिधित्व करता है। दीपक जहाँ जलता है, वहाँ वह अन्धकार को दूर करके प्रकाश फैलाता है। आरती में दीपक जलाने का अभिप्राय ज्ञान की किरणों को चारों ओर फैलाने से है। आरती को चारों ओर घुमाने का कर्थ ज्ञान को सभी दिशाओं में प्रसारित करने का व्रत लेता है।

आरती करते समय यह भावना करनी चाहिये कि आरती के दीपक से हमारे मन का अन्धकार दूर हो रहा है और मानसिक क्षेत्र में चारों ओर ज्ञान का सूर्य अपनी रश्मियों को फैलाये हुये है। दूर तक कहीं अन्धकार का नाम भी नहीं है।

किसी थाल में दीपक या कपूर जलाकर नीचे मन्त्रों का उच्चारण करते हुये यज्ञ भगवान् की श्रद्धापूर्वक आरती करनी चाहिये। आरती करते समय शंख, घण्टे और घड़ियाल की सुविधा हो तो उन्हें भी बजाना चाहिये।

ॐ यं ब्रह्म वेदान्तविदो वदन्ति,
परमं प्रधान पुरुषस्तथान्ये ।
विश्वोद्गते कारणंभीश्वरं वा,
तस्मै नमो विघ्नविनाशनाय ।
ॐ यं ब्रह्मा वरुणेन्द्ररुमरुः स्तुन्वति दिव्यैः ।
स्तवेदैः सांगपद्मक्रोपनिदैर्गायान्त य सामगा ।
ध्यानावस्थित ततगतेन मनसा पश्यन्ति यं योगिनो ।
यस्यान्त न विदुः सुरासुरगणाः देवाय तस्मै नमः ॥

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

घृत अवधान

घृत पौष्टिक खाद्य पदार्थ के अतिरिक्त उत्तम आयुर्वेदिक औषधि मानी जाती है। जब इसका अग्नि से सम्पर्क स्थापित हो जाता है तो इसके गुणों में वृद्धि हो जाती है। वह अधिक रोग निवारक सिद्ध होता है। जब यह मन्त्र शक्ति से प्रभावित हो जाय तो सोने पर सुहागे का काम करता है। जिस मन्त्र से आहुतियाँ दी जाती हैं, उससे यह अभिमन्त्रित हो जाता है और 'इदं न मम' (यह मेरा नहीं है, ईश्वर का है) की उच्च भावना से ओत प्रोत रहता है। अतः प्रणीता पत्र में टपका हुआ भी अधिक पवित्र और तेजस्वी बन जाता है। उसका जहाँ भी प्रयोग किया जाये, उन अङ्गों को स्वस्थ व तेजस्वी कर देगा। इसलिए इसका शरीर के विभिन्न अङ्गों पर लगाने का विधान बनाया गया है।

प्रणीता में टपके घी को दोनों हाथों पर थोड़ा-थोड़ा लगाकर मल लें और अग्नि पर तपावें। निम्न मन्त्रों का उच्चारण करने के बाद उसे सूँघे और नेत्र, मुख, कान, गले आदि पर लगावें।

ॐ तनूपा अग्नेसि तन्व मे पाहि।
ॐ आयुर्दा अग्नेऽस्यायुमे देहि।
ॐ वर्चोदा अग्नेसि वर्चो मे देहि।
ॐ अग्ने यन्मे तन्वा ऊनन्तत्म आपृणः।
ॐ मेधां मे देव सविता आदधातु।
ॐ मेधां मे देवी सरस्वती आदधातु।
ॐ मेधां मे अश्विनौ देवां वाधतां पुष्कर स्रजौ।

भस्म धारण

भस्म में बाहरी वातावरण से सुरक्षित रखने का गुण होता है। भस्म में तेज को सुरक्षित रखने का कारण उसमें अनेकों पदार्थों जैसे

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal.

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

अल्यूनिया, पोटास, सोड़ा बाई कार्ब, लोहा मैगनेशिया आदि की विद्यमानता है। भस्म लगाने से रोम कूप खुलते हैं, अन्दर की गन्दी वायु कार्बनडाई-ऑक्साइड वापस निकलती है और बाहर की प्राणप्रद वायु-आक्सीजन शरीर में प्रवेश करती जो रक्त को शुद्ध करती है, रोग कीटाणुओं का नाश करती है और जठराग्नि बढ़ती है—भस्म विष को दूर करती है, दुर्गन्ध को नष्ट करती है और जखमों पर अच्छा प्रभाव दिखाती है। होली की भस्म को बच्चों की आँखों पर बाँधने से उसकी गर्मी कम हो जाती है।

शरीर को बाहरी वातावरण से सुरक्षित रखना, रोमकूपों के खुलने से वायु को आने जाने के लिए सुविधा देना जठराग्नि को तेज करना विष विकारों को दूर कर भयङ्कर रोगों को हटाकर सात्विक विचारों की स्थापना करना, आज्ञा चक्र सूर्य चक्र आदि का जागरण कुछ ऐसे लाभ हैं जिन्हें हर बुद्धिमान व्यक्ति प्राप्ति करना पसन्द करेगा। इन लाभों को दृष्टि में रखते हुए भस्म का तिलक किया जाता है और है। मस्तक गले, बाहु और हृदय पर भस्म लगाने के मन्त्र नीचे दिये जा रहे हैं स्त्रुवा से या चम्मच को जल से भिगोकर यज्ञ की भस्म ले लें और अनामिका अंगुली से लगावें।

ॐ त्र्यायुषं जमदग्ने। ललाटे।
ॐ कश्यपश्य त्र्यायुषम् ग्रीवायाम्।
ॐ यद्देवेषु त्र्यायुषम्। दक्षिण बाहुमूले।
ॐ तन्नो अस्तु त्र्यायुषम् हृदि।

क्षमा प्रार्थना

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

हवन के कर्मकाण्ड, मन्त्रों के उच्चारण आदि में यदि कोई भूल

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

रह गई हो तो उसके लिए यज्ञ भगवान से क्षमा प्रार्थना करना साधक की नम्रता वृद्धि का द्योतक है।

आवाहन न जानामि नैव जानामि पूजनम् ।
विसर्जन जानामि क्षमस्व परमेश्वर ।१
मन्त्रहीनं क्रियाहीनं भक्तिहीनं सुरेश्वरः ।
यत्पूजितं मया देवं परिपूर्णं दतस्तु मे ।२
यदक्षरपदभ्रष्टं मात्राहीनं च यद् भवेत् ।
तत्सर्वं क्षम्यतां देव प्रसीद परमेश्वरः ।३
यस्य स्मृत्या च नमोक्तया तपोयज्ञक्रियादिषु ।
न्यूनं सम्प्रर्णतां याति सद्यो वन्दे तमच्युतम् ।४
प्रमादात्कुर्वतां कर्म प्रच्यवेताध्यरेयु यत् ।
स्तरणादे व तद्विष्णोः सम्पूर्णः स्यादिति श्रमितः ।५

साष्टाङ्ग नमस्कार

यज्ञ भगवान के प्रति सम्मान, नम्रता और विनय भावना प्रकट करने के लिए किया जाता है। निम्न मन्त्र का उच्चारण करते हुए घुटनों के बल झुककर अथवा हाथ जोड़कर यज्ञ भगवान का साष्टांग नमस्कार करना चाहिए।

नमेऽस्वनन्ताय सहस्रमूर्तये सहस्रपादाक्षिशिरोरूवाहवे ।
सहस्रताम्ने पुरुषाय शाशश्वते सहस्रकोटियुगधारिणे नमः ।।
नमो ब्रह्मण्यदेवाय गोब्राह्मण हिताय च ।
जगाद्धिताय कृष्णाय गोविन्दाय नमों नमः ।
बसुदेव—सुतं देवं कंस—चाणूर मर्दनम् ।
देवकी परमानन्दं कृष्णं वन्दे जगद्गुरुम् ।।

शुभ कामना

यज्ञ का प्रभाव केवल करने वाले तक ही सीमित नहीं रहता वरन् वह प्राणि मात्र के लिए कल्याण कारक सिद्ध होता है। यज्ञ का

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

GC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

अर्थ ही है—त्याग बलिदान। अतः यज्ञ करने वाले का दृष्टिकोण भी उदार बन जाता है और वह 'वसुधैव कुटुम्बकम्' की भावना करता है। वह ईश्वर को सबमें व्यापक देखता है, सबमें ईश्वर के ही दर्शन करता है। अतः वह केवल अपनी स्वार्थ सिद्ध नहीं चाहता वरन् प्राणी मात्र के कल्याण की बात सोचता है और वैसी ही व्यवहार करता है। यदि यज्ञ साधक का दृष्टिकोण संकुचित हो तो समझना चाहिए कि साधना से उसे पूरी सफलता नहीं मिल रही है।

इसलिए दोनों हाथों को अंजलि की तरह बाँध कर जिस तरह एक भिखारी किसी से भीख माँगता है उसी तरह विनय पूर्वक निम्न मन्त्रों का उच्चारण करते हुए प्राणी मात्र के कल्याण के लिए शुभ कामना करें।

स्वस्ति प्रजाभ्य परिपालयन्तां न्यायेनमार्गेण महीं महीशा।
गोब्राह्मणेभ्यो शुभमस्तु नित्यं, लोकाः समस्ताः सुखिनोभवन्तु।१
सर्वे भवन्तु सुखनिः सर्वे सन्तु निरामया।
सर्वे भद्राणि पश्यन्तु मा कश्चिद्दुःखमाप्नुयात्।२
अपुत्राः पुत्रिणाः सन्तु पौत्रिणः।
निर्धनाः सधना सन्तु जीवन्तु शरदां शतम्।३
श्रद्धां मेधां यशः प्रज्ञां विद्यां पुष्टि श्रियम् बलम।
तेज आयुष्यमारोग्यं देहि मे हव्ये वाहन।४

अभिसिंचनम्

मन्त्र शक्ति की विद्युत से अभिमन्त्रित जल को शरीर पर छिड़कने से शरीर में दिव्य गुणों का संचार होता है। जल के मध्यम से विद्युत प्रसार शीघ्र होता है। यह लोक प्रसिद्ध है।

अभिसिंचन का अभिप्राय जल [illegible] प्राणियों में [illegible] व शीतलता उत्पन्न करना भी है।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

कलश के जल से कुशा या आम्रपल्लवों से निम्न मन्त्रों से अभिसिंचन करना चाहिए—

ॐ द्यौः शान्तिरन्तरिक्ष ँ शान्तिः पृथिवी शान्तिरापः शांतिरोषधयः शान्ति वनस्पतयः शान्तिर्विश्वेदेवाः शान्तिर्ब्रह्म शान्तिः सर्वं ँ शान्ति शान्तिरेव शान्तिः सामा शान्तिरेधि ।।

ॐ शान्तिः । शान्तिः । शान्तिः सर्वारिष्टा सुशान्तिर्भवतु ।

प्रदक्षिणा

प्रदक्षिणा का अभिप्राय दक्षिणवर्ती या दाहिने हाथ की ओर घूमना होता है। हर देवता देवी शक्ति का अपना तेजोवलय अर्थात् ज्योतिमण्डल होता है। इनकी गति भी दक्षिणवर्ती होती है। इससे निकालने वाली दिव्य लहरियों भी दक्षिण की ओर से गति करती हैं। यहाँ देव शक्ति प्रतिष्ठित हैं या देवता की मूर्ति स्थापित है, वहाँ चारों ओर एक दिव्य प्रभा बिखरी रहती है जिसका प्रभाव निकट में अधिक और दूर जाने पर क्रमशः कम होता जाता है। प्रदक्षिणा से उस दैवी प्रभा का लाभ उठाया जाता है। दक्षिणवती परिक्रमा करने से उस ज्योतिमण्डल की गति से अनुकूलता प्राप्त हो जाती है। यज्ञ भगवान् का भी अपना ज्योतिमण्डल होता है। उसकी दिव्य लहरियों का साधक पर अनुकूल प्रभाव पड़ता है। तभी यज्ञ की परिक्रमा का विधान बनाया गया है।

निम्न लिखे मन्त्र का उच्चारण करते हुए हवन के चारों ओर एक परिक्रमा करनी चाहिए—

यानि कानि च पापानि ज्ञानाज्ञान कृतानि च।
तानि सर्वाणि नश्यन्ति प्रदक्षिणायां पदे-पदे ।।

विसर्जन

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal.

जिस श्रद्धा भावना से इष्ट देवता ... या,

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

उसी श्रद्धा से उनकी विदाई भी करनी चाहिए। आरम्भ से अन्त तक हमारी सद्भावा बनी रहे, उसके लिए यह विधान बनाया गया है।

बायें हाथ में अक्षत लेकर दायें हाथ से निम्न मन्त्र का उच्चारण करते हुए हवन कुण्ड और इष्ट देवता की प्रतिष्ठित वेदी पर छोड़ते हुए उनके विसर्जन की भावना करनी चाहिए।

गच्छत्वं भगवन्नग्ने स्वस्थाने कुण्ड मध्यत:।
हुतमादाय देवेभ्य: शीघ्रं देहि प्रसीद मे।१
गच्छ गच्छ सुरश्रेष्ठ स्वस्थाने परमेश्वर:।
यत्र ब्रह्मादयो देवास्तत्र गच्छ हुताशन।२
यान्तु देवगणा: सर्वे पूजामादाय मामकीम्।
इष्ट काम समृद्धयर्थ पुनरागमनाय च।३

आरती गायत्री जी की

जयति जय गायत्री माता जयति जय गायत्री माता।
आदि शक्ति तुम अलख निरञ्जन जग पालन कर्त्री।
दुःख शोक भय क्लेश कलह दारिद्र्य दैन्य हर्त्री।।
ब्रह्म रूपिणी प्रणत पालिनी, जगत धातृ अम्बे।
भवभयहारी, जन हितकारी सुखदा जगदम्बे।।
भय हारिणी भय तारिणि अनघे, अज आनन्द राशि।
अविकारी, अघहारो, अविचलित अमले, अविनाशी।।
कामधेनु सत् चित् आनन्द जय गङ्गा गीता।
सविता की शाश्वती शक्ति तुम सावित्री सीता।।
ऋक्, यजु, साम अथर्व प्रणयिनी, प्रणव महामहिमे।
कुण्डलिनी, सहस्रार, सुषुम्ना, शोभा गुण गरिमे।।
स्वाहा स्वधा शची ब्रह्माणी राधा रुद्राणी।
जय शतरूपा वाणी विद्या कमला कल्याणी।।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

जननी हम हैं दीन हीन दुख दारिद के घेरे।
यदपि कुटिल कपटी कपूत तऊ बालक हैं तेरे ॥
स्नेह सभी करुणामय माता चरण शरण दीजै।
बिलख रहे हम शिशु सुत तेरे दया दृष्टि कीजै ॥
काम, क्रोध मद, लोभ, दम्भ, दुर्भाव, द्वेष हरिये।
शुद्ध बुद्धि, निष्पाप हृदय मन को पवित्र करिये ॥
तुम समर्थ सब भाँति तारिणी. तुष्टि पुष्ठि त्राता।
मत मारग पर हमें चलाओ जो है सुख दाता ॥
जयति जय गायत्री माता, जयति जय गायत्री माता।

यज्ञ की महिमा

यज्ञ रूप प्रभो हमारे भव उज्जवल कीजिये।
छोड़ देवें छल कपट की, मानसिक बल दीजिये ॥
वेद की बोलें ऋचायें, सत्य को धारण करें।
हर्ष में हों मग्न सारे शोक सागर से तरें ॥
अश्वमेधादिक ऋचाएं, यज्ञ पर उपकार को।
धर्म-मर्यादा चलाकर, लाभ दें संसार को ॥
नित्य श्रद्धा-भक्ति से यज्ञादि हम करते रहें।
रोग पीड़ित विश्व के, सन्ताप सब हरते रहें ॥
कामना मिट जायें मन से पाप अत्याचार की।
भावनाएँ पूर्ण होवें, यज्ञ से नर-नारि की ॥
लाभकारी हों हवन हर जीवधारी के लिए।
वायु जल सर्वत्र हों शुभ गंध का धारण किये ॥
स्वार्थ भाव मिटे हमारा, प्रेम पथ विस्तार हों।
'इदं न मम' का सार्थक, प्रत्येक में व्यवहार हो ॥
हाथ जोड़ झुकाये मस्तक वन्दना हम कर रहे।
नाथ करुणा रूप करुणा, आपकी सब पर रहे ॥

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

अर्घ्यदान

यजुर्वेद ३६।२४ में सूर्य भगवान् से प्रार्थना की गई है कि हम उनकी कृपा से सौ वर्ष तक देखें, सौ वर्ष तक जीवित रहें, सौ वर्ष तक सुनें, सौ वर्ष तक दीनता रहित रहें, सौ शरद ऋतुओं को पूर्ण करते हुए अधिक काल तक स्थित रहें। यजुर्वेद ७।४२ में सूर्य की शक्ति का वर्णन करते हुए लिखा गया है कि वह सूर्य अद्भुत और दिव्य रश्मियों के पुञ्ज रूप हैं। वे मित्र, वरुण और अग्नि के चक्षु के समान प्रकाशवान् हैं। स्थावर, जंगम रूप विश्व की आत्मा और संसार को प्रकाशित करने वाले ये सूर्य उदित होकर स्वर्ग, पृथ्वी अन्तरिक्ष को अपने तेज परिपूर्ण करते हैं।

सूर्य से बुद्धि का सम्बन्ध हैं मस्तक पर जल लगाकर सूर्य के सामने खड़ा हुआ जाय तो इससे बुद्धि का विकास होता है। मन्त्र शक्ति की विद्युत से प्रभावित जल से सब सूर्य की रश्मियाँ मिलती है तो नग्न शरीर पर पड़ने वाला उसका प्रभाव भी कई गुना बढ़ जाता है। सूर्य के लाभों को दृष्टि में रखते हुए उन्हें अर्घ्यदान उनके प्रति श्रद्धा भावना प्रकट करने का भी प्रतीक हैं। निम्न मन्त्र का उच्चारण करते हुए अर्घ्यदान देना चाहिए।

ॐ सूर्य देव सहस्रांशो तेजो राशि जगत्पते।
ॐ ननुकम्पाय तां भक्त्या गृहणार्घ्यं दिवाकर ॥
ॐ सूर्याया नमः भास्कराय नमः,
ॐ आदित्याय नमः ॥

—०—

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

गायत्री साधना के नियम

गायत्री की सिद्धि के लिए नियमों का पालन आवश्यक है। अतः उनकी जानकारी यहाँ दे रहे हैं—

१–शरीर की शुद्धि आवश्यक है। बाह्य शुद्धि स्नान द्वारा ही मानी जाती है। अतः स्नान करके ही साधना पर बैठना चाहिए। अधिक सर्दी हो, ऐसा रोग हो जिसमें स्नान न किया जा सके या कोई विवशता हो तो हाथ-मुँह धोकर या गीले कपड़े से शरीर पोंछना ही पर्याप्त समझना चाहिए।

२–शरीर पर कम से कम वस्त्र रखने चाहिए। सर्दी के मौसम में कम्बल का प्रयोग किया जा सकता है।

३–साधना का स्थान शान्त व सात्विक हो। वैसे तो सरिता तट, न बन पड़े तो अपने घर में ही एकान्त स्थान चुन लेना चाहिए, जहाँ अन्य सदस्यों का अधिक आना जाना न हो।

४–दिन भर पहने हुए वस्त्रों को पहन कर ही साधना नहीं करनी चाहिये।

५–साधना के लिये ऐसे आसन पर बैठना चाहिये जिसमें अधिक देर तक बैठने में कष्ट न हो। पालथी-मारकर सीधे-सीधे ढङ्ग से बैठना उपयुक्त रहता है।

६–मेरुदण्ड सदा सीधा हो ताकि सुषुम्ना में प्राण का प्रवाह सुविधा पूर्वक हो सके।

७–कुश के आसन पर बैठकर साधना करनी चाहिए। इसका प्रयोग सात्विक उपासना में चलता है। रजोगुणी उपासना में सूत का

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

आसन और तमोगुणी उपासना में ऊन के आसन का विधान है। बिना आसन बिछाए नग्न भूमि पर न बैठना चाहिए।

८–साधारणत: तुलसी की माला का प्रयोग होता है। सत्काम साधना में चन्दन की माला और तमोगुणी साधन में रुद्राक्ष की माला प्रयुक्त होती है।

९–प्रात:काल का समय श्रेष्ठ माना जाता है। ब्रह्ममुहूर्त में उठकर साधना करनी चाहिए। कोई विवशता हो तो सूर्यास्त होने के एक घण्टे बाद तक की जा सकती है।

१०–साधना नियमित और निश्चित समय पर होनी चाहिये।

११–जप माला से करना चाहिए। मन्त्र शक्ति का अनुभव करने के लिए कम से कम ११ माला नित्य करनी ही चाहिए। अपनी सुविधा के अनुसार १, ३, ५, ७, ९ माला का जप किया जा सकता है।

१२–दिशा का विचार आवश्यक है। प्रात:काल पूर्व की ओर और सायंकाल पश्चिम की ओर मुख करके बैठना चाहिए। विशिष्ट साधनाओं के अनुसार दिशा का विचार करना चाहिए।

१३–सामूहिक साधना में या जहाँ और व्यक्तियों का आना जाना हो माला वस्त्र से ढक लेनी चाहिए या गोमुखी में रखनी चाहिए। एकान्त स्थान होने पर इसे खुले रूप जपा जा सकता है।

१४–जप इस तरह से करना चाहिए कि कण्ठ से ध्वनि तो होती रहे और होंठ भी मिलते रहें परन्तु पास में बैठा व्यक्ति उसे सुन न सके।

१५–एक माला पूरी होने पर सुमेरु का उल्लंघन नहीं किया जाता बल्कि उसे मस्तिष्क तथा नेत्रों से स्पर्श करके पीछे की तरफ उल्टा कर पुन: जप आरम्भ कर दिया जाता है।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

१६–मन्त्र साधना में और लोगों को प्रेरित करना ही परमार्थ का कार्य है परन्तु अपनी साधना व अनुभवों से दूसरों को परिचित करना न आवश्यक है और अभीष्ट।

१७–साधारणतः पूजा में पुष्पों का प्रयोग होता है। इनके अभाव में चावलों का प्रयोग किया जा सकता है।

१८–जैसा अन्न होता है, वैसा ही मन बनता है। इसलिए तमोगुणी और रजोगुणी आहार से यथा सम्भव बचना और सात्विक आहार करना चाहिए।

१६–व्यवहार जितना सात्विक हो, उत्तम है। झूठ, छल, कपट, निन्दा बेईमानी, भ्रष्टाचार आदि से बचना चाहिये।

२०–कामोत्तेजक चल-चित्रों तथा उपन्यासों से बचें। धार्मिक व अन्य प्रेरक पुस्तकों का अध्ययन करना चाहिए। अध्ययन में विशेष सावधानी बरतनी चाहिए। अध्ययन के साथ मनन व चिन्तन भी होना चाहिए।

२१–पूजा से बचे पदार्थों को जहाँ तहाँ नहीं फेंकना चाहिए। इन्हें किसी तीर्थ, नदी, मन्दिर आदि में विसर्जित करना चाहिए। चावल चिड़ियों को खिला देने चाहिए। नैवेद्य का बच्चों में प्रसाद के रूप में वितरण कर देना चाहिए। जल से सूर्य को अर्घ्यदान देना चाहिए।

२२–किसी अनुभवी गुरु के निर्देशन में साधना में आने वाले विघ्नों और बाधाओं को दूर करने की क्षमता रखते हों।

२३–सफर में या रोग की स्थिति में जब विधि-विधान से जप सम्भव न हो तो मानसिक जप चलते फिरते अथवा विस्तार पर भी किया जा सकता है।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal
२४–वैसे तो साधना से उठना उपयुक्त नहीं माना जाता है परन्तु जब

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

मल-मूत्र त्याग या किसी विवशता से उठना पड़े तो हाथ-मुँह धोकर पुनः साधना पर बैठ जाना चाहिये और एक माला प्रायश्चित स्वरूप अतिरिक्त जपनी चाहिये।

२५–वैसे तो प्रतिदिन की नियमित साधना ही श्रेष्ठ स्वीकार की गई है परन्तु कोई बाधा उपस्थित हो जाये और साधना न हो सके तो दूसरे दिन एक माला प्रायश्चित स्वरूप करनी चाहिये।

२६–जन्म या मृत्यु के सूतक होने पर विधि विधान से की गयी साधना का निषेध है इस काल में मानसिक जप किया जा सकता है।

२७–इष्टदेव के प्रति अटूट श्रद्धा और विश्वास होना अनिवार्य है। यही साधना की नींव है।

२८–साधना में अनेकों विघ्न आते हैं। उससे निराश नहीं होना चाहिये। शीघ्र लाभ प्रतीत न होने पर साधना पर अविश्वास नहीं करना चाहिये वरन् अपनी साधना की कमियों की गम्भीरता पूर्वक निरीक्षण करना चाहिये और उन्हें दूर करके पुनः साधना में लग जाना चाहिये। साधना में दृढ़ता पूर्वक लगे रहना आवश्यक है।

२९–नित्य प्रति निर्धारित समय पर ही साधना करनी चाहिये। समय बदलना नहीं चाहिये।

३०–मन के चंचल स्वभाव से वह इधर-उधर घूमता रहता है, उसे बार-बार इष्टदेव के चित्र पर जमाने का अभ्यास करना चाहिये। उपरोक्त नियमों का पालन करने पर ही साधना में सफलता मिलती है।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

—×—

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

नियमों का दृढ़ता से पालन किया जाए

—×—

गायत्री मन्त्र शक्ति विकास की एक व्यवस्थित व वैज्ञानिक प्रणाली है। शास्त्रों में इससे जो लाभ प्राप्ति के माहात्म्य वर्णित किए गये हैं, उनमें कुछ भी संदेह नहीं करना चाहिए। क्योंकि लाखों वर्षों से लाखों करोड़ों साधकों ने इस तथ्य की पुष्टि की है। परन्तु इस लक्ष्यकी प्राप्ति के लिए जिन नियमों का वर्णन शास्त्रों में किया गया है, उनका पालन करना भी आवश्यक है! नियमों का पालन न करने पर भी सफलता की आशा करना बुद्धिमानी नहीं है। भोजन की सिद्धि के लिये गेहूँ को साफ करके चक्की पर पिसवाना पड़ता है। आटा बनने पर इसमें जल मिलाकर एक निश्चित विधि से गूँधना पड़ता है। फिर अग्नि के सहयोग से उसे सेंक कर रोटी का आकार बनता है और वह खाने योग्य बनती है। साग सब्जी को काट करके, साफ करके जल से धोकर आवश्यक जल मिलाकर, अग्नि पर एक निश्चित समय के लिये, निश्चित ताप देना पड़ता है, उनमें नमक, मिर्च, मसाला आदि मिलाने पड़ते हैं और बीच-बीच में देखभाल कर मिलाना पड़ता है। तभी साग अच्छा व स्वादिष्ट बन पड़ता है। यदि इनमें से एक नियम की भी अवहेलना की जाये तो साग सिद्धि असम्भव है। इसका हर नियम आवश्यक है। सभी वस्तुएँ डालकर यदि उसे अग्नि पर न रखा जाये तो साग कैसे बन जायेगा? जल की आवश्यकता होने पर यदि जल न डाला जाये तो साग के जलने की सम्भावना रहती है। हर नियम का अपना अपना विशेष महत्त्व रहता है। भोजन के सम्बन्ध में तो समझना सहज है कि यदि इसके एक भी नियम का पालन न किया गया तो

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

भोजन बनाने में व्यवधान आना स्वाभाविक है उसी तरह मन्त्र सिद्धि के लिए जो नियम निर्धारित किए गए हैं, यदि उनका दृढ़ता पूर्वक पालन न किया गया तो निश्चय पूर्वक असफलता हाथ लगेगी, गायत्री शक्ति पर दोषारोपण करना उचित न होगा। अतः गायत्री मन्त्र से इच्छानुसार लाभ प्राप्त करने के लिए निम्न महत्वपूर्ण तथ्यों की ओर ध्यान देना चाहिए। इनमें से एक की भी अपेक्षा की गयी तो लाभ असंदिग्ध रहेगा।

प्रातः काल ब्रह्म मुहूर्त में उठकर शौच आदि से निवृत्त होकर स्नान कर स्वच्छ वस्त्र धारण करे और किसी बगीचे, सरिता के तट पर या अपने घर के स्वच्छ कमरे में साधना के लिये स्थान ग्रहण करें। सामने चौकी पर अपने इष्टदेव और दीक्षा गुण का चित्र होना चाहिए। यदि मूर्त्ति पूजा पर आस्था न हो तो 'ओंकार' का चित्र अथवा ध्यान के लिये घृत का दीपक जला लेना चाहिये। धूप, अगरबत्ती से वातावरण को सुगन्धित करे। स्थान ऐसा चुनना चाहिए जहाँ कोयले आदि का विषाक्त धुँआ न आता हो, क्योंकि साधक को प्रणाम करना होगा। उसका उद्देश्य तो फेफड़ों में स्वच्छ वायु पहुँचाना है, यदि विषैला धुँआ ऊपर आता होगा तो लाभ की अपेक्षा हानि होगी साधना के अनुसार आसन का चुनाव करना चाहिये। हर प्रकार की साधना के लिये अलग-अलग आसनों का विधान रहता है। आसव अपना अलग-अलग होना चाहिए भूमि पर बैठकर साधना करने से दु.ख बांस पर दरिद्रता, पत्थर पर बैठकर जप करने से व्याधि, छिद्र युक्त काष्ठ पर दुर्भाग्य, तृण पर धन व यश का नाश और पत्तों पर बैठकर जप करने से चित्त में भ्रम होता है। अतः अपनी साधना के लिए उसके अनुरूप विशिष्ट आसन का चुनाव करना चाहिए।

दिशा विचार भी आवश्यक हैं। अपने मन में किसी भी दिशा में
Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal
बैठकर जप नहीं करना चाहिए। भिन्न उद्देश्यों के लिए भिन्न दिशाओं

CC-0 In Public Domain. Digitization by eGangotri

का निर्देश किया है। जैसे उड्डीश तन्त्र के अनुसार वशीकरण में पूर्व-मुख, धन की प्राप्ति के लिए पश्चिम की, आयु रक्षार्थ, शांति व पुष्टि कर्म में उत्तर को मुख करके जप करना चाहिए। जप करते समय पैरों को फैलाकर बैठना, बातें करना, नख काटना, रस्सी तिनका या डोरा तोड़ना बालों को बांधना आदि कार्य निषिद्ध माने गये हैं। यह भारद्वाज स्मृति ।१।२।८। में लिखा है।

शास्त्र की आज्ञा है कि—

सदोपवीतिना भाव्यं सदा बद्धशिखेन च।
विशिखा व्युपवीतश्च यत्करोति न तत् कृतम् ॥

अर्थात्—सदैव यज्ञोपवीत ग्रहण करना चाहिए और सदाशिखा में ग्रन्थि लगाये रहना चाहिए। इनके अभाव में जो कार्य सम्पादन किया जाता है वह असफल रहता है।'

जप की संख्या निश्चित होनी चाहिए। इस माला के माध्यम से गिनना चाहिए। भिन्न साधना के लिए भिन्न प्रकार की माला निश्चित की जाती है। अतः साधना के लिए उपयुक्त माला ही ग्रहण करनी चाहिए। प्रातःकाल में नाभि मध्याह्न में हृदय और सन्ध्याकाल में नासिका के निकट हाथ रखकर जप करना चाहिए।

जप के पूर्व सन्ध्या और मुद्राओं का प्रदर्शन करना चाहिए। संध्या आदि के बिना यदि जप आरम्भ किया जायेगा तो मन इधर-उधर उछल-कूद करेगा, उसे एकाग्र करना कठिन पड़ जायेगा। जप साधना के पूर्व मन को कुछ उलझाना आवश्यक है। अन्यथा एकाग्रता में बाधा उपस्थित होगी।

ध्यान के लिये इष्टदेव का सुन्दर चित्र हो। उसके अंग-प्रत्यंग को भली प्रकार देखकर ध्यान करना चाहिये। आकृति अस्पष्ट होने पर बार-बार देखकर ध्यान जमाने का प्रयत्न करना चाहिए।

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

सुयोग्य गुरु से दीक्षा अवश्य लेनी चाहिए। केवल पुस्तकों से पढ़ कर समझना करने से अभीष्ट सिद्धि नहीं होती क्योंकि साधन क्षेत्र की बाधाओं और उसके निवारण के उपायों से गुरु भली प्रकार परिचित होते हैं। साधक की प्रकृति और क्षमता के अनुसार वह उपयुक्त निर्देश देते हैं और त्रुटियों का परिमार्जन भी साथ-साथ करते चलते हैं जिससे मार्ग प्राशस्त करने में सुविधा है। यदि मार्ग की रुकावटों को दूर करने वाला मार्ग दर्शन न हो तो साधना सिद्धि में देरी होना स्वाभाविक है।

॥ समाप्त ॥

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal

CC-0.In Public Domain. Digitization by eGangotri

श्रेष्ठतम धार्मिक साहित्य

वेद

ऋग्वेद ४खण्ड-सम्पूर्ण (भा.टी.)
अथर्ववेद २खण्ड-सम्पूर्ण (भा.टी.)
यजुर्वेद–सम्पूर्ण (भा.टी.)
सामवेद-सम्पूर्ण (भा.टी.)

उपनिषद्

१०८ उपनिषद् ३ खण्ड (भा.टी.)
वृहदारण्यकोपनिषद् (भा.टी.)
छान्दोग्योपनिषद (भा.टी.)

गीता

ज्ञानेश्वरी भगवद्गीता (भा.टी.)
अष्टावक्र गीता (भा.टी.)

दर्शन

वैशेशिक दर्शन (भा.टी.)
न्याय दर्शन (भा.टी.)
सांख्यदर्शन (भा.टी.)
योग दर्शन (भा.टी.)
बेदान्त दर्शन (भा.टी.)
मीमांसा दर्शन (भा.टी.)

रामायण व धर्मशास्त्र

आनन्द रामायण (भा.टी.)
पंचतन्त्र (भा.टी.)
योग वासिष्ठ २ खण्ड (भा.टी.)
विचार सागर (भा.टी.)
२० स्मृतियाँ २ खण्ड (भा.टी.)
मनुस्मृति (भा.टी.)

पुराण साहित्य

शिव पुराण २ खण्ड (भा. टी.)
विष्णु पुराण २ खण्ड (भा. टी.)
मार्कण्डेय पुराण २ खण्ड (भा. टी.)
गरूड़ पुराण २ खण्ड (भा. टी.)
देवी भागवत पुराण २ खण्ड (भा. टी.)
हरिवंश पुराण २ खण्ड (भा. टी.)
ब्रह्माण्ड पुराण २ खण्ड (भा. टी.)
भविष्य पुराण २ खण्ड (भा. टी.)
पद्म पुराण २ खण्ड (भा. टी.)
वामन पुराण २ खण्ड (भा. टी.)
कालिका पुराण २ खण्ड (भा. टी.)
कूर्म पुराण २ खण्ड (भा. टी.)
वाराह पुराण २ खण्ड (भा. टी.)
मत्स्य पुराण २ खण्ड (भा. टी.)
गणेश पुराण (भाषा)
सूर्य पुराण (भा. टी.)
आत्म पुराण (भाषा)
कल्कि पुराण (भा. टी.)
देवी भागवत पुराण (भाषा)
गायत्री पुराण (भाषा)
विश्वकर्मा पुराण (भाषा)
श्रीमद्भागवत सप्ताह कथा (भाषा)
महाभारत साइज १८''x२२'' /८ भाषा
महाभारत साइज २०''x३०'' /१६भाषा
रामचरित मानस मूल गुटका
अदभुत रामायण (भा. टी.)

संस्कृति संस्थान
ख्वाजा कुतुब, (वेदनगर) बरेली-२४३ ००३ (उ. प्र.)
फोन : (0581) 474242

Prof. Madhav Prasad Lamichhane Collection, Kathmandu, Nepal